चौथी दुनिया

हिंदी का पहला साप्ताहिक अखबार

www.chauthiduniya.com

नक्सली चले शहर की ओर

सियासी दुनिया पेज 3

भाजपा एक कटी पतंग है?

सियासी दुनिया पेज 5

साकार हुआ सपना

अपनी दुनिया पेज 7

पाकिस्तान को बचाने का आख़िरी मौक़ा

बाक़ी दुनिया पेज 11

मूल्य 5 रुपये

दिल्ली, 2 नवंबर-8 नवंबर 2009

नक्सलियों पर होंगे हवाई हमले

कम से कम भारत में पहली बार भारत की सेना का गौरवशाली अंग भारत की वायुसेना एक ख़तरनाक काम करने जा रही है, वह काम है- अपने ही देश के लोगों पर गोलियों और बमों से आकाश द्वारा हमला. अगर यही काम सीमा पर युद्ध के दौरान होता तो हम गर्व से तालियां बजाते, पर जो होने जा रहा है वह शर्मनाक है. शर्मनाक इसलिए अगर पैसा और योजना ग़रीबी दूर करने, विकास के काम करने पर लगता तो एक तरह का माहौल बनता, पर यह सब ग़रीबों की समस्याओं को ख़त्म करने की जगह ग़रीबों को ही ख़त्म करने जा रहा है. जमीन पर कौन है नक्सलवादी, कैसे पता लगाएंगे आकाश पर उड़ने वाले हवाई जहाज और हेलीकॉप्टर? बाज़ार जा रहे झुंड में लोग या फिर नरेगा के तहत काम कर रहे लोग या रात में जाड़े में नींद न आने के कारण नाचते गाते लोग कहीं इस अभियान का शिकार न बन जाएं. सवाल यह भी है कि नक्सलवादी विचारधारा के साथ जा रहे लोग हमारी व्यवस्था से निराश लोग हैं, पर अपने हैं. आपको बताते हैं कि सरकार का इस पर क्या सोचना है और उसकी योजना क्या है?

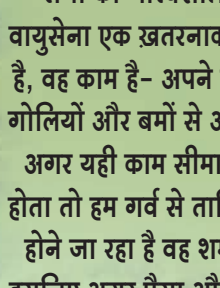

रूबी अरुण

नक्सलियों का बचना अब नामुमकिन है, क्योंकि गृह मंत्रालय ने उन्हें खाक़ में मिलाने की तैयारी पूरी कर ली है. एक नवंबर से वायु सेना के विमान, हेलीकॉप्टर और अर्द्ध-सैनिक बलों के जवान नक्सलियों पर क़हर बनकर टूट पड़ेंगे. आसमान से ज़मीन तक घेराबंदी कर नक्सलियों को चुन-चुन कर मारा जाएगा और इस पूरे ऑपरेशन की मियाद होगी एक महीने. यानी कि नवंबर का पूरा महीना *ऑपरेशन ग्रीन हंट* की भेंट चढ़ेगा. नक्सल प्रभावित आठ राज्य *ऑपरेशन ग्रीन हंट* से महीने भर थर्राते रहेंगे. सरकार इस बार हर हाल में उनका शिकार करने का मन बना चुकी है. सुरक्षा संबंधी कैबिनेट की बैठक में जल्दी ही वायुसेना को इस बात के आदेश दे दिए जाएंगे कि ऑपरेशन के दरम्यान नक्सलियों को देखते ही वह गोली मार दें. यह भी मुमकिन है कि इसके पहले उन्हें देश का दुश्मन भी घोषित कर दिया जाए. शुरुआत होगी झारखंड के उन सीमावर्ती इलाक़ों से जहां से माओवादी छत्तीसगढ़ और पश्चिम बंगाल में प्रवेश करते हैं. यहां अर्द्धसैनिक और केंद्रीय सुरक्षा बलों के हज़ारों जवानों को बख्तरबंद गाड़ियों में तैनात किया जाएगा. जिसकी रुप रेखा पूरी तरह तैयार की जा चुकी है. गृह मंत्रालय के एक वरिष्ठ अधिकारी के मुताबिक़ सेना के तीन अत्याधुनिक वाहन ध्रुव, द्रोण और वाइपर *ऑपरेशन ग्रीन हंट* की शुरुआत करेंगे. इन वाहनों की दीवारें विस्फोटरोधी पदार्थ से बनाई गई हैं और इनका स्टील भयंकर विस्फोट में भी उच्च सुरक्षा प्रदान करता है. ये वाहन उबड़-खाबड़ और पथरीले इलाक़ों में भी तेज़ गति से एक जगह से दूसरी जगह आसानी से ले जाए जा सकते हैं और इन पर बारूदी सुरंगों का भी कोई असर नहीं पड़ता. लिहाज़ा इस बार की नक्सलियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई बिल्कुल ही अलग अंदाज़ में होगी. ज़मीन पर अर्द्ध-सैनिक बलों और सेना की टुकड़ियां माओवादियों को अपनी गिरफ़्त में लेंगी तो आसमान से वायुसेना उन पर गोलियां और हथगोले बरसाएगी. उनके बचने का कोई रास्ता नहीं होगा. इसी योजना के तहत पश्चिम बंगाल के लालगढ़ में केंद्रीय बलों की 17 कंपनियां तैनात कर दी गई हैं. इन कंपनियों ने गृह मंत्रालय के निर्देश पर अभी से मोर्चाबंदी शुरू कर दी है. इस बाबत पश्चिम बंगाल के मुख्यमंत्री बुद्धदेव भट्टाचार्य लगातार गृहमंत्री पी चिदंबरम के संपर्क में हैं. हालांकि रेल मंत्री ममता बनर्जी सरकार की इस कार्रवाई से नाराज़ हैं और वे लालगढ़ से सुरक्षा बलों को हटाने के लिए सरकार पर दबाव भी बना रही हैं. इस ऑपरेशन में अहम भूमिका निभा रहे छत्तीसगढ़ पुलिस के एक बड़े अधिकारी ने बताया कि नक्सलियों के ख़िलाफ़ इस ऑपरेशन का वक़्त भले ही एक माह का तय किया गया हो, पर यह मुहिम तब तक जारी रहेगी, जब तक कि नक्सलियों को जड़ से ख़त्म नहीं कर दिया जाता या फिर नक्सली हिंसा का रास्ता पूरी तरह से छोड़ नहीं देते.

गृह मंत्रालय ने वायुसेना अध्यक्ष पीवी नायक को झारखंड, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल आदि राज्यों के नक्सल प्रभावित ज़िलों में नक्सलियों के ठिकानों के नक़्शे सौंप दिए गए हैं. जब वायुसेना के विमान और हेलीकॉप्टर नक्सलियों पर हमला करेंगे, उस वक़्त उन पर वायुसेना के विशेष कमांडो गरूड़ बल के जवान भी मौजूद रहेंगे ताकि वे हमले के जवाब में नक्सलियों के आक्रमण से वायुसेना के जवानों, उपकरणों और हेलीकॉप्टरों की रक्षा कर सकें.

हालांकि सरकार ने *ऑपरेशन ग्रीन हंट* शुरू करने के पहले एक और सार्थक पहल की है. चूंकि झारखंड सबसे ज़्यादा नक्सल प्रभावित राज्य है, इसलिए इसकी शुरुआत भी यहीं से की गई है. सरकार चाहती है कि ऑपरेशन शुरू करने से पहले वह आदिवासियों का भरोसा जीते. इसके तहत आदिवासियों के ख़िलाफ़ दर्ज़ एक लाख से ज़्यादा मामले वापस लेने की प्रक्रिया भी शुरू कर दी गई है. आदिवासियों के ख़िलाफ़ ज़्यादातार मामले लकड़ी काटने, संरक्षित वन क्षेत्र में जानवर चराने, शिकार खेलने आदि के हैं. गृह मंत्रालय ने सुरक्षा उपकरण बनाने वाली कंपनी लक्ष्मी डिफेंस आर्म को ऐसे जीवनदायी जैकेट बनाने का ऑर्डर दिया है जिन पर एके 47 की गोलीबारी का असर न हो.

महाराष्ट्र, हरियाणा और अरुणाचल प्रदेश में विधानसभा चुनावों के संपन्न हो जाने के बाद गृह मंत्रालय में बैठकों का दौर जारी है. गृहमंत्री के निर्देश पर आंतरिक सुरक्षा देख रहे सभी अधिकारी नक्सल प्रभावित राज्यों के मुख्यमंत्रियों से बातचीत कर तालमेल बनाने का काम कर रहे हैं ताकि महीने भर चलने वाले ऑपरेशन ग्रीन हंट के दरम्यान राज्य सरकारों के सर-फुटौव्वल का दुष्परिणाम इस पर न पड़े. और केंद्र सरकार नक्सली समस्या का अंत कर सके.

हालांकि इस पूरे ऑपरेशन के दरम्यान केंद्र सरकार की सबसे बड़ी जो चिंता है वो यह कि देश की क़ानून-व्यवस्था न बिगड़े. अपने ही नागरिकों पर हवाई हमलों और सैन्य कार्रवाई करने से कहीं देश में आंतरिक युद्ध जैसे हालात न पैदा हो जाएं. आपात स्थिति का सामना न करना

(शेष पृष्ठ 2 पर)

हमारी जानकारी के अनुसार सरकार नक्सलवादी क्षेत्रों में मीडिया पर सेंसर लगाने की भी तैयारी कर चुकी है.

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने नए टेलीविज़न चैनलों के विनियमन पर स्पष्टीकरण मांगकर भारतीय दूरसंचार नियामक प्राधिकरण (ट्राई) की परेशानी बढ़ा दी है.

दिल्ली का बाबू

दिलीप चेरियन

बढ़ते चैनल, बढ़ती मुश्किलें

भारतीय दूरसंचार नियामक प्राधिकरण (ट्राई) वोडाफोन और एयरटेल जैसी कंपनियों को स्पेक्ट्रम आवंटन के मुद्दे पर पहले से ही उलझा था. अब सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने ट्राई की मुश्किलें बढ़ा दी हैं. अंबिका सोनी ने नए टेलीविज़न चैनलों के विनियमन पर स्पष्टीकरण मांगा है. ज़ाहिर है कि मंत्रालय देश में दिन–ब–दिन चैनलों की बढ़ती संख्या से परेशान है. सबसे ज़्यादा परेशानी तो दूरसंचार मंत्रालय के ऑपरेटरों के लिए 3 जी स्पेक्ट्रम की नीलामी की तैयारियों से है.

सूत्रों के मुताबिक़, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के सचिव रघु मेनन ने ट्राई के अध्यक्ष जे एस शर्मा को नए चैनलों को दी जाने वाली अनुमति प्रक्रिया से संबंधित आर्थिक क्षमता और योग्यताओं के मापदंड निर्धारित करने के लिए पत्र लिखा है. सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने यह प्रस्ताव भी रखा है कि चैनलों से एक सहमति पत्र पर हस्ताक्षर करवाए जाने चाहिए, जिसमें चैनल की आर्थिक क्षमता के ब्योरे के अलावा इस बात का भी उल्लेख हो कि उसके कर्मचारियों की नौकरी सुरक्षित रहेगी. सूचना एवं प्रसारण मंत्री अंबिका सोनी के लिए यह बड़ी चिंता की बात है. वह पहले ही इस मुद्दे पर गृह मंत्रालय और राज्य के मुख्यमंत्रियों को पत्र लिख चुकी हैं. इधर बाबू इन सब बातों से बेपरवाह इस मुग़ालते में जी रहे हैं कि जब भविष्य में समस्या और बड़ी हो जाएगी तो वे इसे अकेले ही संभाल लेंगे.

माया प्रदेश में करे कोई, भरेंगे बाबू

मायावती के उत्तर प्रदेश में बाबुओं का जीना मुहाल है. मुख्यमंत्री का कोपभाजन होने का सीधा मतलब है स्थानांतरण या पदावनत का आदेश. अगर इससे बचने में वे सफल हो भी गए तो मुख्यमंत्री के चहेतों की वक्र दृष्टि से उनका बचना मुश्किल हो जाता है. और, अब वे कोर्ट द्वारा राज्य में मूर्तियों और स्मारकों के निर्माण पर रोक संबंधी दिए आदेश की अवहेलना करने के कारण सुप्रीम कोर्ट के शिकंजे में आ गए हैं. कोर्ट ने प्रदेश के मुख्य सचिव ए के गुप्ता के ख़िलाफ़ कोर्ट की अवमानना करने का नोटिस जारी किया है. अगर कोर्ट का रुख़ यूं ही सख्त रहा तो गुप्ता को जेल की हवा भी खानी पड़ सकती है. एक ओर जहां गुप्ता मायावती की जिद का ख़ामियाज़ा भुगत रहे हैं, वहीं दूसरी ओर मुख्यमंत्री के एक और क़रीबी एस सी मिश्रा को हाशिए पर पटक दिया गया है. इन घटनाओं से इतना तो साफ़ है कि स्मारक से जुड़ा मुद्दा ख़त्म होते–होते कई लोगों पर गाज़ गिराएगा और साथ ही बाबुओं को यह याद भी दिलाता रहेगा कि माया प्रदेश में काम करने की क़ीमत तो चुकानी ही पड़ेगी.

नक्सलियों पर होंगे हवाई हमले

पृष्ठ 1 का शेष

पड़े, इसलिए इस ऑपरेशन के दरम्यान सरकार हर संभव एहतियात और चौकसी बरतने की कोशिश करेगी. चूंकि फ़िलहाल चुनौतियां सीमा पार से भी हैं. सीमा पर हज़ारों आतंकवादी मौक़े की ताक़ में हैं कि कब भारतीय सुरक्षा बलों से चूक हो और वे भारत में कोहराम मचा सकें. लिहाज़ा नवंबर के महीने में जब *ऑपरेशन ग्रीन हंट* चल रहा होगा तब वह वक़्त भारतीय सुरक्षा ख़ुफ़िया एजेंसियों और भारत की लोकतांत्रिक सरकार के लिए अग्निपरीक्षा का दौर होगा.

गृह मंत्रालय के एक वरिष्ठ अधिकारी बताते हैं कि नक्सलियों को मटियामेट करने के लिए की जा रही ये कार्रवाई बिल्कुल वैसी ही होगी, जैसी पाकिस्तान की तालिबान के ख़िलाफ़.

केंद्र सरकार और वायुसेना की इस कार्रवाई से माओवादी नेता बेहद गुस्से में हैं. वह बड़े आहत भी हैं. भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के पोलित ब्यूरो के सदस्य कोटेश्वर राव उर्फ किशन जी कहते हैं कि माओवादियों पर गोली चलाने की बात पर वायुसेना को फिर सोचना होगा. वे भारत देश के निवासियों पर ऐसा क़दम कैसे उठा सकते हैं? हम न तो किसी दूसरे देश के एजेंट हैं न ही बाहरी आक्रमणकारी या आतंकवादी, फिर भी सरकार हमारे दामन के लिए ऐसे नृशंस क़दम कैसे उठा सकती हैं.

इसी के मद्देनज़र सी पी एम माओवादी ने बीते तीन अक्तूबर को देशव्यापी बंद का आह्वान भी किया था. उन्होंने माओवादियों के ख़िलाफ़ वायुसेना और थल सेना के इस्तेमाल पर रोक लगाने की अपील भी की थी. किशन जी के मुताबिक़ यह हमला माओवादियों पर नहीं बल्कि ग्रामीण जनता पर हैं. सरकार अगर यह सोचती है कि इस तरह के हमले कर वह माओवादियों को पस्त कर सकती हैं तो वह मुग़ालते में है. यह तो बिल्कुल वैसी ही कार्रवाई होगी जैसी श्रीलंकाई सेना ने लिट्टे को ख़त्म करने के लिए की थी.

समाजसेविका और जानी मानी लेखिका अरुंधती राय कहती हैं कि सरकार तब तक ऐसी कार्रवाई नहीं कर सकती जब तक वह माओवादियों को देश का दुश्मन घोषित न कर दे. सवाल यह हैं कि क्या हम एक समस्या से निपटने के लिए ऐसे अराजक हालात पैदा कर दें कि हमें अपने ही देश के नागरिकों का नरसंहार करना पड़े? ऐसा तो किसी भी देश की सरकार नहीं करना चाहेगी. तो ज़ाहिर है हमें दूसरे उपाय तलाशने पड़ेंगे. हैरानी इस बात की है कि गृहमंत्री दूसरे तरीक़े क्यों नहीं अपनाते?

पिछले दिनों दिल्ली पुलिस ने कोबाड गांधी जैसे प्रमुख नक्सली नेता को गिरफ़्तार किया तो सबको बड़ी हैरानी हुई कि पलामू के जंगलों से निकल नक्सली आज इस कदर पंख फैला चुके हैं कि देश की राजधानी में भी उनकी दबिश मज़बूती से महसूस की जा रही है. कोबाड ने पुलिस की पूछताछ में बताया कि वे आदिवासी जो छत्तीसगढ़, झारखंड, आंध्र प्रदेश, उड़ीसा के जंगलों में रहते हैं. बदहाली का जीवन जीते हैं. नस्ली परायापन झेलते हैं और यही भेदभाव उनके ख़ून में ज़हर बन कर घुल जाती है. फिर वे अपने ही देश के तथाकथित अभिजात्य और अमीर लोगों के ख़िलाफ़ नक्सलवादियों की सेना के तौर पर काम करने लगते हैं. विकास के नाम पर उनका जो ख़ौफ़नाक दमन और शोषण होता है वही उन्हें हिंसक बना देता है.

यक़ीनन कोबाड गांधी की ये बातें मन को झिंझोरती हैं. सोचने को मजबूर करती हैं कि शोषण से उपजा नक्सलवाद जब सेना के दमन से गुज़रेगा तब उसकी प्रतिक्रिया कितनी ख़ौफ़नाक होगी. हालांकि गृह मंत्रालय के इस फ़ैसले पर कई सवाल भी उठ रहे हैं. पूर्व पुलिस महानिदेशक अरुण भगत कहते हैं कि सरकार के लिए नक्सलियों के ख़िलाफ़ हवाई कार्रवाई आसान नहीं होगी, क्योंकि जिन जंगलों और बस्तियों में यह कार्रवाई होनी हैं वहां आम लोगों और नक्सलियों के बीच फ़र्क़ करना असंभव होगा. ऐसे में इस कार्रवाई के नतीजे भीषण हो सकते हैं. गृहमंत्री लगातार इस बात को कह रहे हैं कि वे देश में नक्सलवाद को जड़ से उखाड़ फेंकेगे. वे जिस तरीक़े से फ़ैसले ले रहे हैं वो हैरत भी पैदा करते हैं. वे नक्सलप्रभावित राज्यों का दौरा कर रहे हैं. वहां की सरकारों को भरोसे में ले रहे हैं. पर गृहमंत्री ने जिस कदर कड़ा रुख़ अपनाया है वह कई संशय भी पैदा करता है.

पंजाब में आतंकवाद के ख़िलाफ़ निर्णायक लड़ाई लड़ चुके पंजाब पुलिस के पूर्व पुलिस महानिदेशक सी पाल सिंह कहते हैं कि नक्सलवाद से सरकार अन्य दूसरे तरीक़ों से भी निपट सकती है. कम से कम नक्सलवाद की समस्या हमारे देश में उतनी भयंकर नहीं हुई है जितना पंजाब में आतंकवाद था. तब भी हवाई हमले की योजना नहीं बनी थी. हां, ये बात अलग है कि नक्सलवाद का क्षेत्र ज़्यादा विस्तृत हो गया है और इसलिए गृहमंत्री और प्रधानमंत्री इसे आतंकवाद से भी बड़ा मुद्दा बता रहे हैं. सरकार की इस मुहिम से नक्सलवादी भले ही मटियामेट हो जाए पर इस हवाई कार्रवाई का बड़ा ख़ामियाज़ा देश को उठाना होगा. इस लड़ाई से देश की आंतरिक सुरक्षा की स्थिति बिल्कुल ही चरमरा जाएगी क्योंकि इन हमलों में निर्दोष भी मारे जाएंगे.

आदिवासियों से जुड़े मसलों और दिक़्क़तों पर ज़मीनी तौर पर काम करने वाले ग्लैडसन डुंगडुंग कहते हैं कि अगर सरकार चाहती है कि वह किसी भी अराजक स्थिति से बचे तो उसे पहले ख़ुद के सिस्टम को दुरुस्त करना होगा. सरकार नक्सलियों के ख़िलाफ़ कार्रवाई करने तो निकली है पर वह विधि व्यवस्था के लिए और भी मुश्किलें खड़ी कर रही हैं. डुंगडुंग बेहद नाराज़गी भरे स्वर में कहते हैं कि सरकार के हवाई हमले के बाद यह आंदोलन पहाड़ों जंगलों से निकल कर दिल्ली और मुंबई की सड़कों तक पहुंच जाएगा. दमन और शोषण से बचने की फिराक़ में नक्सली फिर शहरों का रुख़ करेंगे. डुंगडुंग कहते हैं कि गृहमंत्री पी चिदंबरम की इस मुहिम के पीछे उनकी क्या नीयत है, उस पर ग़ौर करना होगा. यह सोचना होगा कि आख़िर नक्सली क्यों उन्हीं इलाक़ों में हैं जो खनिज–लवण और प्राकृतिक संपदा से भरपूर हैं? सरकार ने पूंजीपतियों और उद्योगपतियों ने इन इलाक़ों का अंधाधुंध दोहन किया है. विकास के नाम पर आदिवासियों का शोषण किया है. जंगली इलाक़ों में अगर बांध बनाए जाते हैं. सड़कें बनती हैं. कल–कारखानें की स्थापना होती है तो विस्थापित आदिवासी होते हैं. उनकी संपदा, उनकी लकड़ियों पर पूंजीपति अपना पहरा बैठा देते हैं और जो वहां के मूल निवासी होते हैं वो दो वक़्त की रोटी के भी मोहताज़ हो जाते हैं. अगर कोई अपने हक़ की आवाज़ उठाता हैं तो उसे छत्तीसगढ़ के मज़दूर नेता शंकर गुहा नियोगी की तरह मार दिया जाता हैं. ऐसे में ख़ुद की ज़िंदगी बचाने के लिए ये बेबस ग़रीब बंदूक़ न उठाएं तो क्या करें?

इन हालातों में ज़रूरत है कि सरकार इनसे सहानुभूतिपूर्वक बात करें. इनकी समस्याओं को सुनें और उसे ईमानदारी से दूर करने का जतन करें. पर सरकारों ने यह कोशिश कभी नहीं की और आज भी वह नक्सलियों पर हवाई हमले कराने की योजना बनाकर एक और भयंकर भूल कर रही है. अरुंधति राय तो साफ़ तौर पर गृहमंत्री पी चिदंबरम की नीयत पर ही सवाल खड़ा करती हैं. कहती हैं कि यहां यह समझना ज़्यादा ज़रूरी है कि आख़िर गृहमंत्री ऐसा क़दम क्यों उठा रहे हैं? क्या वे पूंजीपतियों का साथ दे रहे हैं? क्या वे प्राकृतिक संसाधनों को उनके हवाले करना चाहते हैं? माओवादियों के दमन के नाम पर मल्टीनेशनल कंपनियों की मदद करना चाहते हैं? आख़िर क्या मक़सद है उनका? शिवराज पाटिल जब देश के गृहमंत्री थे तो गृह मंत्रालय से एक रिपोर्ट बाहर आ गई थी. उसमें नक्सलवाद को सबसे बड़ी आंतरिक चुनौती माना गया था और उससे निपटने के सुझाव भी दिए गए थे. हैरानी की बात यह हैं कि उसमें यह ज़िक्र था कि उन इलाक़ों में विकास की रफ़्तार धीमी कर दी जाए जो नक्सलवाद से ज़्यादा ग्रसित हैं. चिदंबरम आज जो नक्सलवाद के ख़िलाफ़ सीधा अभियान चला रहे हैं उसको समझना बेहद अहम है.

गृहमंत्री भी मानते हैं कि विकास के लिए जो ज़बरदस्ती की जा रही है वह नक्सलवाद को बढ़ावा दे रही है. बावजूद इसके चिदंबरम ज़ोर–ज़बरदस्ती पर क्यों तुले हैं. ये बात समझ से परे हैं.

हालांकि चिदंबरम ने गृहमंत्री के तौर पर एक सख्त प्रशासक की छवि बनाई है. पर उन्होंने ऐसा कड़ा क़दम पाकिस्तान और सीमापार आतंकवाद के ख़िलाफ़ तो नहीं उठाया. पहले लालगढ़ में राज्य प्रशासन को किनारे कर केंद्रीय सुरक्षा बलों को मैदान में उतारना और अब सीधे हवाई हमले की योजना बनाना. यह बात पी चिदंबरम के फ़ैसले को कठघरे में ज़रूर खड़ा करती है.

संदेह वाज़िब है. देश के 50 सबसे ज़्यादा खनिज लवणों से समृद्ध क्षेत्रों पर नक्सलियों का क़ब्ज़ा है और इस कारण वहां उद्योग–धंधे चला रही मल्टीनेशनल कंपनियां परेशानी में हैं. नक्सलियों के सफाए से सबसे अधिक फ़ायदा इन्हीं कंपनी मालिकों को है और पी चिदंबरम उद्योगपतियों के पुराने हिमायती रहे हैं. लिहाज़ा उनके इस फ़ैसले को व्यापक मायनों में देखने की ज़रूरत हैं. ज़ाहिर है इतने कड़े फ़ैसलों का निहितार्थ महज़ वो नहीं हो सकता जो दिख रहा है. ख़ासकर तब जब फ़ैसले गृहयुद्ध का असर पैदा करते हों. बहरहाल, सरकार और वायुसेना *ऑपरेशन ग्रीन हंट* के ज़रिए माओवादियों के सफाए के लिए बिल्कुल तैयार है.

ruby@chauthiduniya.com

चौथी दुनिया
देश का पहला साप्ताहिक अखबार

वर्ष 1 अंक 34, 2 नवंबर–8 नवंबर 2009

संपादक
संतोष भारतीय

मैसर्स अंकुश पब्लिकेशंस प्राइवेट लिमिटेड के लिए मुद्रक व प्रकाशक रामपाल सिंह भदौरिया द्वारा जागरण प्रकाशन लिमिटेड डी 210–211 सेक्टर 63, नोएडा उत्तर प्रदेश से मुद्रित एवं के– 2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001 से प्रकाशित

संपादकीय कार्यालय

के –2, गैनन, चौधरी बिल्डिंग
कनॉट प्लेस, नई दिल्ली 110001

कैंप कार्यालय एफ–2, सेक्टर –11, नोएडा
गौतमबुद्ध नगर उत्तरप्रदेश – 201301

फोन न.

संपादकीय 011–23418962
विज्ञापन + 0120–4783999
प्रसार + 91 9810017924
फैक्स न. 0120–4783950

पृष्ठ–16 (+4 बिहार व झारखंड)

चौथी दुनिया में छपे सभी लेख अथवा सामग्री पर चौथी दुनिया का कॉपीराइट है. बिना अनुमति के किसी लेख अथवा सामग्री के पुनः प्रकाशन पर क़ानूनी कार्रवाई की जाएगी.

समस्त कानूनी विवादों का क्षेत्राधिकार दिल्ली न्यायालयों के अधीन होगा.

दिल्ली से 250 किलोमीटर दूर यमुना नगर ज़िला मुख्यालय के समीप छछरौली उपनगरीय इलाक़े की दीवारें क्रांतिकारी नक्सली नारों से पटी दिखाई देती हैं- *वोट नहीं, चोट दो, चुनाव का करो बहिष्कार, क्रांति के लिए हो जाओ तैयार.*

नक्सली चले शहर की ओर

सिर्फ़ वामपंथी विचारधारा के चलते ही नहीं, बल्कि महंगाई, मंदी और बेरोज़गारी आदि दिक़्क़तों से जूझ रहे आम लोग भी नक्सलियों के हमराह बन रहे हैं. निदान ज़रूरी है, लेकिन सरकारी तरीका न तर्कसंगत है और न व्यायसंगत. कैसे बनेगी बात?

फोटो – *पीटीआई*

अप्पू एस्तोस सुरेश

प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह वर्ष 2006 से ही लगातार नक्सलियों को देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा ख़तरा बताते रहे हैं. गृहमंत्री पी चिदंबरम भी अपना नज़रिया पेश करते रहे हैं, जबकि नार्थ ब्लॉक के हुक्मरान नक्सलियों के ख़ात्मे की अंतिम रूपरेखा तैयार करने में तल्लीन रहे हैं. यहां तक कि जब गृह मंत्रालय नक्सलियों के विरुद्ध मुहिम के पहले चरण की तैयारी कर रहा था तो नक्सली देश के शहरी इलाक़ों में सफलतापूर्वक पैठ बना चुके थे.

हाल ही में नई दिल्ली में सीपीआई (माओवादी) की केंद्रीय समिति और पोलित ब्यूरो के सदस्य कोबद घांदव की गिरफ़्तारी आंखें खोल देने वाली घटना थी. घांदव शहरी क्षेत्रों में अतिवादी विचारधारा के प्रसार का प्रभारी था. शासन और उसका ख़ुफ़िया अमला घांदव की गिरफ़्तारी को अपनी कामयाबी बता रहा है तो सीपीआई (माओवादी) इसे महज़ तात्कालिक कामयाबी बताकर शासन के दावे को अंगूठा दिखा रही है. अगर हरियाणा के यमुना नगर ज़िले में नक्सलियों और माओवादियों की गतिविधियों की तह में जाएं तो उनके आत्मविश्वास के कुछ आधार अवश्य नज़र आते हैं. अप्रैल 2009 में यमुना नगर में 30 नक्सलियों की गिरफ़्तारी हो चुकी थी और हरियाणा पुलिस उनके क़ब्ज़े से 37 कारतूस, चार देसी पिस्तौल, दो नाइन एमएम पिस्तौल, दो थ्री नॉट थ्री राइफल, चार डेटोनेटर, दो ग्रेनेड और नक्सली साहित्य के अलावा भारी मात्रा में गोला बारूद बरामद कर चुकी थी.

नक्सली हरियाणा में किस तरह अपनी शक्ति बढ़ा रहे हैं और किस तरह शासन के लिए चुनौती बनकर सामने आ रहे हैं, यह जानने के लिए हमने वहां की यात्रा की. दिल्ली से 250 किलोमीटर दूर यमुना नगर ज़िला मुख्यालय के समीप छछरौली उपनगरीय इलाक़े में दीवारें क्रांतिकारी नक्सली नारों से पटी दिखाई देती हैं– *वोट नहीं, चोट दो; चुनाव का करो बहिष्कार, क्रांति के लिए हो जाओ तैयार; जनता की आज़ादी की राह है माओवाद! माओवाद!!* यहां तक कि नक्सलियों ने यहां लोगों के बीच चुनाव का बहिष्कार करने का आह्वान करते हुए परचे तक बंटवाए हैं.

दिलचस्प तो यह है कि छछरौली और इसके आसपास के इलाक़े में सामाजिक आंदोलन या विस्थापन आदि का कोई इतिहास नहीं रहा है, जिससे नक्सलियों की पैठ की कोई गुंजाइश भी नज़र आए. यमुना नगर कोई अकेला उदाहरण नहीं है. 2005 के बाद से पूरे हरियाणा में 11 मामले सामने आ चुके हैं. इनमें से तीन नरवाना, एक उचाना, चार कैथल, दो कुरुक्षेत्र और एक मामला करनाल से जुड़ा है.

सुरक्षा मामलों के विशेषज्ञ अजय साहनी के मुताबिक़, देश के शहरी इलाक़ों में अपने प्रभाव का विस्तार काफी लंबे समय से नक्सलियों की रणनीति का हिस्सा रहा है. अगर मैं सही याद कर पा रहा हूं तो आप इसे पीपुल्स वार ग्रुप के 2002 के दस्तावेज़ में देख सकते हैं. 2007 में पार्टी यूनिटी कांग्रेस में भी इस संकल्प को दोहराया गया. 36 वर्षों के लंबे अंतराल के बाद 2007 में प्रतिबंधित संगठन सीपीआई (माओवादी) की नौवीं पार्टी यूनियन कांग्रेस का आयोजन हुआ. सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि वर्ष 2004 में पीपुल्स वॉर ग्रुप और माओवादी कम्युनिस्ट सेंटर के विलय के बाद दोनों की यह पहली बैठक थी. यूनिटी कांग्रेस ने दलित विरोध आंदोलन और विशेष आर्थिक क्षेत्र (एसइजेड या सेज) के ख़िलाफ़ प्रदर्शन की कामयाबी की ज़ोरदार चर्चा की और माना कि जन आंदोलन ही पार्टी की जड़ को मज़बूत करने का ज़रिया हो सकता है. यूनिटी कांग्रेस ने इसे दूसरी पार्टियों के लिए एक दस्तावेज़ के तौर पर अहम मुद्दा दे दिया. वह भी यह कहते हुए कि सामंतवाद या अर्द्ध सामंतवाद का मसला जातिवाद और ब्राह्मणवादी विचारों से जुड़ा हुआ है. इसलिए माओवादी–नक्सलवादी प्रभाव को कम करने के लिए जातियों के संघर्ष को कम करने की ज़रूरत है.

जाति एक महत्वपूर्ण कारक है, यह इस तथ्य से पता चलता है कि हरियाणा से गिरफ़्तार किए गए 29 नक्सली–माओवादियों में से 13 हरिजन थे, जबकि शेष दूसरी पिछड़ी जातियों से ताल्लुक रखते थे. 2007 में यमुना नगर के नज़दीक इस्माइलपुर में गुर्जर लड़के और हरिजन लड़की के बीच प्रेम संबंध को लेकर दोनों जातियों के बीच ठन गई. नक्सलियों ने इस विवाद का ख़ूब फ़ायदा उठाया. उस समय यमुना नगर के पुलिस अधीक्षक रहे के वी रमणा के मुताबिक़, हरियाणा में नक्सली गतिविधियों के पीछे मास्टर माइंड प्रदीप कुमार था, जो कुरुक्षेत्र में डॉक्टरी पेशे में है. वह इस्माइलपुर के वाशिंदे सिमरत सिंह के संपर्क में आया और शिवालिक जनसंघर्ष मोर्चा के बैनर तले जनसभाएं और बैठकें आयोजित करने लगा. प्रदीप के नेतृत्व में वे स्थानीय निवासियों के पक्ष में विभिन्न मुद्दों को उठाने लगे, इससे उन्हें लोगों का भी समर्थन मिलने लगा. उसी दौरान हमें उनकी दूसरी गतिविधियों के बारे में जानकारियां मिलीं कि वे किस तरह दुष्प्रचार के कामों में लगे हैं और आग्नेयास्त्र (असलहे) आदि जुटा रहे हैं. इसके बाद संगठन भूमिगत होकर कार्य करने लगा.

इस्माइलपुर के निवासी भी पुलिस के इस कथन की पुष्टि करते हैं. गांव के सरपंच 44 वर्षीय नरेंद्र सिंह कहते हैं, कुछ माह पहले तक यहां हमने नक्सली गतिविधियां देखी हैं. चुनाव के बहिष्कार के लिए वे अभियान चलाते थे. बैठकें करते थे और पोस्टरबाज़ी करते थे. इसकी शुरुआत गुर्जर और हरिजनों के बीच एक छोटी सी झड़प से हुई थी. 16 जून 2009 को नक्सलियों ने एक ग्रामीण नीतू की हत्या कर दी. उन्हें शक़ था कि वह पुलिस को उनकी गतिविधियों की जानकारी देता है. पुलिसिया जांच की रिपोर्ट के मुताबिक़, प्रदीप वर्ष 2006 में हरियाणा में बाढ़ राहत कार्यों में सक्रिय था. उसी दौरान वह माओवादियों के संपर्क में आया. इसके बाद वह हरिद्वार में आयोजित क्षेत्रीय बैठक में शामिल हुआ. प्रत्येक माह की पांच या छह तारीख़ को वह नई दिल्ली के अंतरराज्यीय बस अड्डे पर विशेष दूत के जरिए केंद्रीय नेतृत्व का निर्देश, प्रचार सामग्री, रक़म और हथियार प्राप्त करता था.

पुलिस सूत्रों के मुताबिक़, इस्माइलपुर में प्रदीप कुमार का ख़ासमख़ास सिमरत सिंह बहुत ही शातिर और तेज़तर्रार था. नक्सली गतिविधियों में संलिप्तता के कारण पुलिस द्वारा मोस्ट वांटेड करार सिमरत सिंह फ़िलहाल पुलिस की गिरफ़्त में है. सातवीं कक्षा में ही पढ़ाई छोड़ चुका सिमरत अंग्रेज़ी जानता है. हथियार चलाने और देसी बम को बनाने की ट्रेनिंग उसे झारखंड के जंगलों में मिली है. यमुना नगर के आसपास के इलाक़ों में कई लोगों को नक्सली विचारधारा और गतिविधियों से जोड़ने में सिमरत और प्रदीप कामयाब रहे थे.

इसे महज़ संयोग ही कहेंगे कि प्रदीप और सिमरत दोनों एक बार धरे गए थे. दोनों के पास से देसी हथियार मिले थे. लेकिन निचली अदालत ने दोनों को रिहा करने का आदेश दे दिया. रिहाई के बाद से ही पुलिस उन पर निग़ाह रख रही थी. दोनों ने क़रीब दस संगठनों की नींव रखी (देखें बॉक्स). जून 2009 में सिमरत फिर से गिरफ़्तार हो गया. सुरक्षा विशेषज्ञ साहनी के मुताबिक़, माओवादी अपना आधार बनाने के लिए किसी भी मौक़े का इस्तेमाल करने से नहीं चूकते. जाति का इस्तेमाल भी उन्होंने रणनीतिक तौर पर ही किया. छिपी गतिविधियों को अंजाम देने से पहले कई सालों तक सुनियोजित तरीक़े से वे लोगों के बीच काम करते रहे. शहरी भारत में नक्सली और माओवादियों के प्रभाव बढ़ाने की गुप्त योजना से वाक़िफ़ एक स्रोत ने अपनी पहचान छिपाने के अनुरोध पर इस संवाददाता से कहा कि माओवादियों की मंशा में बदलाव पिछले यूनिटी कांग्रेस के बाद से ही नज़र आने लगा था. आदिवासी इलाक़े तो परंपरागत तौर पर नक्सलियों के गढ़ रहे हैं, लेकिन इस सीमा से निकल कर अपने साम्राज्य को और ज़्यादा विस्तार देने के सपने को वे साकार करना चाहते थे. यूनिटी कांग्रेस में यह भी निर्णय लिया गया कि संघर्ष में वैसी शक्तियों के साथ जुड़ने की भी कोशिश की जाएगी, जो कम्युनिस्ट विचारधारा में विश्वास नहीं रखती हैं.

सूत्रों की मानें तो नक्सली शहर के आसपास के गांवों को बफ़र ज़ोन बनाने की कोशिश में थे, जहां रहकर शहरी जीवन को प्रभावित करने की मुहिम को अंजाम दिया जा सके. नक्सलियों ने यमुना नगर को अपना केंद्र क्यों बनाया, इसे समझ पाना कोई मुश्किल नहीं है. एक तो यह राष्ट्रीय राजमार्ग से कई किलोमीटर दूर है. चंडीगढ़ और देहरादून यहां से 70 किलोमीटर से भी कम दूरी पर हैं तथा राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली भी यहां से ज़्यादा दूर नहीं है. यमुना नगर में जंगल है और नदी का किनारा भी, जो नक्सलियों को पुलिसिया कार्रवाई से बचने के लिए छिपने की सुरक्षित जगह उपलब्ध कराता है. सूत्रों का कहना है कि नक्सलियों ने दिल्ली और मुंबई के आसपास के इलाक़ों के औद्योगिक क्षेत्र को अपना निशाना बनाने की योजना बना रखी है.

सीपीआई (माओवादी) के महासचिव गणपथि ने 2007 में एक साक्षात्कार दिया था, जिसे दल के प्रवक्ता आज़ाद ने जारी किया था. इस साक्षात्कार में शहरी भारत में नक्सलियों की योजना का संकेत दिया गया था. साक्षात्कार में कहा गया था कि यह सच है कि भारतीय मध्य वर्ग की संख्या में बढ़ोतरी हुई है, लेकिन साथ ही भारतीय मध्य वर्ग का एक बड़ा हिस्सा महंगाई, बेरोज़गारी और जीवन की असुरक्षा जैसी समस्याओं से जूझ रहा है. शिक्षा, स्वास्थ्य और परिवहन के मद में ख़र्च बढ़ गए हैं. कहने का मतलब यह है कि मध्य वर्ग की संख्या भले बढ़ी हो, परेशानियां बढ़ीं तो उनकी हताशा भी बढ़ी. छात्र, शिक्षक और सरकारी कर्मचारी तक अपनी मांग मनवाने के लिए सड़कों पर उतर आए. यहां तक कि शॉपिंग मॉल और खुदरा क्षेत्रों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश से आहत दुकानदारों ने भी आंदोलन की राह पकड़ी.

एक बात और भी ग़ौर करने वाली है. कल तक जो चीज़ें विलासिता की वस्तु समझी जाती थीं, आज वे जीवन की ज़रूरत बन गई हैं और बाज़ार में हर रोज़ उपभोक्ता वस्तुओं के नई आमद से लोगों के ज़रूरत की सूची दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है. लोगों में हताशा इसलिए भी बढ़ रही है, क्योंकि वे इन वस्तुओं को हासिल कर पाने में ख़ुद को असहाय पा रहे हैं. वजह, उनकी सारी आमदनी तो भोजन, आवास, वस्त्र आदि पर ही ख़र्च हो जाती है. भारत का मध्य वर्ग महंगाई, मंदी और बेरोज़गारी से सर्वाधिक प्रभावित हुआ है. इन बातों को ध्यान में रखते हुए हमारी पार्टी ऐसे मसलों पर मध्य वर्ग को संघर्ष के लिए तैयार करने की योजना बना रही है. गृह मंत्रालय के उच्च पदस्थ सूत्रों से मिले संकेत के मुताबिक़, शहरी भारत में नक्सलियों से मुक़ाबला करने की कोई सुनिश्चित योजना नहीं है. साहनी के मुताबिक़, गृह मंत्रालय के पास तो आदिवासी इलाक़ों में भी बचाव के उपाय की कोई कारगर योजना नहीं है. वह समझता है कि समस्याग्रस्त इलाक़ों में अर्द्धसैनिक बलों की बटालियन भेज देने भर से समस्या का हल निकल आएगा. आंदोलन के खड़ा होने में वक़्त लगा है तो इसे इस तरह से ख़त्म भी नहीं किया जा सकता है.

मानवाधिकार कार्यकर्ता गौतम नवलखा भी साहनी की बातों से सहमति जताते हैं. वह कहते हैं कि यह विध्वंसकारी है. सरकार के रवैये से पता चलता है कि वह लोगों के दुखदर्द से कितनी दूर हो चुकी है. यह सरकार ही है, जो कहती है कि पाकिस्तान के साथ युद्ध समस्या का समाधान नहीं है. लेकिन अपने ही नागरिकों के लिए जंग का ऐलान करने में वह बेशर्मी पर उतर आती है. जिन स्थानों को नक्सलियों का गढ़ माना जाता है, संयोगवश वहां बड़े उद्योगपतियों के कल कारखाने भी हैं. और, इन कल कारखानों का मतलब है खनिज और वन्य संसाधनों का भरपूर दोहन और लूट. इन समस्याओं का समाधान खोजने की जगह सरकार नक्सली हिंसा की आड़ में इन इलाक़ों में विरोध की आवाज़ को दबा कर उद्योगपतियों की परेशानी दूर करना चाहती है. यहां सवाल यह है कि नक्सलियों के नाम पर निरीह ग्रामीणों को तबाह करने के अलावा क्या सरकार के पास इस समस्या का कोई ठोस समाधान भी है? नक्सली समस्या जटिल ज़रूर है, लेकिन इसका समाधान असंभव नहीं है. बशर्ते सरकार की मंशा साफ़ और इरादे मज़बूत हों और उसमें नेकनीयती ज़रूर हो.

feedback@chauthiduniya.com

प्रमुख संगठन

इनकी गिनती हरियाणा के प्रमुख नक्सली संगठनों में की जाती है

- क्रांतिकारी मज़दूर यूनियन
- दिशा सांस्कृतिक मंच
- महिला मुक्ति मोर्चा
- नव जनवादी क्रांति मोर्चा
- जन शिवालिक संघर्ष मोर्चा
- क्रांतिकारी मंच
- क्रांतिकारी मज़दूर किसान मंच
- अखिल भारतीय क्रांतिकारी मंच
- क्रांतिकारी आदिवासी मंच
- भारत का प्रगतिशील जनवादी मोर्चा

सांकराइल थाने के ओसी अतींद्रनाथ की छाती पर माओवादियों ने जो लिखा था, उन लाल अक्षरों में उनके ख़ूंख़ार इरादों की झलक साफ दिखाई देती है. वैसे इस प्रकरण में माओवादी आंदोलन का मानवीय चेहरा दिखाने की एक नाकाम कोशिश भी की गई.

बाइस अक्टूबर की शर्मनाक शाम

लाल सलाम

विमल राय

लालगढ़ के पास स्थित जंगल में बाइस अक्टूबर को देर शाम आठ बजे जो दृश्य दिखा, उसकी आज़ाद भारत में कोई मिसाल नहीं मिलती. एक तरफ़ थी मीडिया और दूसरी तरफ़ थे एक बंधक को रिहा करने आए सशस्त्र माओवादी. गमछे में लिपटे माओवादियों के चेहरे दिख नहीं रहे थे, पर उनकी आंखों का दुस्साहस कोई भी पढ़ सकता था. मीडिया से आराम से बात हुई, सवाल-जवाब हुए. यह भी बताया गया कि उनके दयालु नेता किशन जी ने ओसी अतींद्रनाथ दत्त के परिवार को दिया गया वचन पूरा किया. लेकिन तथाकथित मानवीय आधार पर रिहाई पाने वाले सांकराइल थाने के ओसी की छाती पर जो लिखा था, उन लाल अक्षरों में माओवादियों के ख़ूंख़ार इरादे की एक और झलक देखी गई. वैसे इस प्रकरण में माओवादी आंदोलन का मानवीय चेहरा दिखाने की भी कोशिश की गई.

रिहाई वाले नाटक की पटकथा काफी सोच समझकर लिखी गई थी. कुछ किलोमीटर ही दूर था सुरक्षाबलों का शिविर, पर यहां पहुंचने की उन्हें मनाही थी. 22 अक्टूबर को एक बांग्ला चैनल को दिए गए लाइव इंटरव्यू में माओवादी नेता किशन जी ने कहा कि उन्होंने मांगें ही ऐसी रखी हैं, जिन्हें मानने में सरकार को असुविधा न हो. छत्रधर महतो की गिरफ़्तारी के बाद माओवादियों को सबसे बड़ी चिंता पश्चिमी मिदनापुर में अपना जन समर्थन बहाल रखने की थी. दूसरी बात यह कि छत्रधर को केवल आदिवासी नेता मानकर लंबे समय तक अपने खेमे में रखना चाहते हैं माओवादी. इसी वजह से किशन जी ने उनकी रिहाई की शर्त नहीं रखी. लालगढ़ अभियान के दौरान माओवादियों की मदद करने के आरोप में पकड़ी गई 15 आदिवासी महिलाओं की रिहाई की शर्त रखने के पीछे भी यही मक़सद था. माओवादी गांववालों को बताना चाहते थे कि छत्रधर के न होने के बावजूद उन्हें डरने या हताश होने की ज़रूरत नहीं है. हम हैं आपकी मदद के लिए.

लालगढ़ अभियान में लगे सुरक्षाबलों की ताक़त माओवादियों से ज़्यादा है, इसमें कोई शक़ नहीं, पर राज्य पुलिस के नेतृत्व में लागू की जा रही सुरक्षाबलों की रणनीति बार-बार असफल हुई है. लालगढ़ सहित हिंसा प्रभावित कई थानों को माओवादियों से मुक्त कराने के बाद सरकार जैसे निश्चिंत हो गई. यहीं पर बड़ी भूल हुई. माओवादियों की रीढ़ तोड़ने तक प्रभावित इलाक़ों के हर थाने में अत्याधुनिक हथियारों से लैस सुरक्षाबलों की कुछ टुकड़ियां तैनात रखनी चाहिए थीं, पर ज़्यादातर थानों को बंगाल पुलिस के भरोसे ही छोड़ दिया गया.

20 अक्टूबर को जब माओवादियों ने जब सांकराइल थाने पर हमला किया तो राज्य के पुलिस महानिदेशक भूपेंद्र सिंह 70 किलोमीटर दूर मिदनापुर शहर में माओवादियों के ख़िलाफ़ रणनीति बनाने में मशगूल थे. एक महिला नक्सली कमांडर की अगुवाई में 11 मोटर साइकिलों पर सवार होकर भरी दोपहर में आए माओवादियों ने थाने के दो सब इंस्पेक्टरों को मौत के घाट उतारा, एक को रहम की भीख दी और अतींद्रनाथ को बंधक बनाकर साथ लेकर चले गए.

सरकार के हाथ-पांव फूल गए. मांगें रखने के बाद उसने तीन विकल्पों पर विचार शुरू किया. पहला था, लालगढ़ व आसपास के इलाक़ों में संयुक्त बलों का आपरेशन जारी रखना और अपने मुख़बिरों के ज़रिए अपहृत ओसी का पता करना. दूसरी रणनीति थी, प्रभावित इलाक़ों में धावा बोलकर दूसरे पायदान के माओवादियों को पकड़ना और बदले में ओसी की रिहाई के लिए दबाव बढ़ाना. तीसरा विकल्प सरकार ने सोचा कि माओवादियों से बातचीत की प्रक्रिया शुरू करने के बहाने उन्हें उलझाए रखा जाए, ताकि वे ओसी के ख़िलाफ़ कोई कड़ा क़दम न उठा सकें.

21 अक्टूबर की रात किशन जी ने भी कहा कि वह कल मुख्य सचिव अशोक मोहन चक्रवर्ती से बात कर सकते हैं. अगर सरकार उनकी मांग मान लेती है तो ओसी की रिहाई हो जाएगी. मुख्यमंत्री बुद्धदेव भट्टाचार्य ने भी ओसी की रिहाई को सर्वोच्च प्राथमिकता कहा. सरकार को राज्य के चार नक्सल प्रभावित ज़िलों में काम कर रहे पुलिसवालों के मनोबल का भी ख्याल रखना था. सरकार आख़िर झुकी. 21 अक्टूबर को ही मिदनापुर ज़िला अदालत में 14 माओवादी समर्थक महिलाओं को पेश किया गया और सरकार ने जमानत का विरोध नहीं किया. इस तरह माओवादियों की दुर्गावाहिनी आज़ाद हो गई.

इसके कुछ घंटों पहले ऐसा लगा कि सब कुछ ख़त्म हो जाएगा. सुरक्षाबलों ने अभियान ज़ारी रखा था और किशन जी आसपास के किसी गांव में से ही टीवी पर लाइव इंटरव्यू दे रहे थे. टीवी पर गोलियों की आवाज़ भी सुनाई दे रही थी. लाखों दर्शकों के बीच ही उन्होंने हुंकार भरी कि सरकार अगर सचमुच ओसी की रिहाई के प्रति गंभीर है तो उसे अभियान तुरंत बंद करना होगा और पीछे लौटना होगा. उनकी धमकी का असर हुआ और सुरक्षाबल अपने शिविर में लौट आए. ओसी सुरक्षित है, यह यक़ीन दिलाने के लिए परिवार के किसी एक सदस्य को उससे मिलवाने का भी उन्होंने आश्वासन दिया. इसके पहले ओसी के परिवारवालों ने कोलकाता में मुख्यमंत्री से मुलाक़ात कर रिहाई की गुहार की. मुख्यमंत्री ने ओसी की नन्हीं बिटिया को आश्वासन भी दिया कि उसके पापा लौट आएंगे. दुखी बाप को किशन जी से यह पता करने की गुहार करनी पड़ी कि उनका बेटा जहां-जहां तैनात हुआ है, उसके ख़िलाफ़ निर्दोषों को सताने का कोई मामला नहीं है और वह चाहें तो पता कर सकते हैं.

जिस तरह पत्रकार का वेश धरकर पुलिस ने छत्रधर को गिरफ़्तार किया था और अपनी पीठ ठोंकी थी, किशन जी ने उसी बिरादरी के सामने रिहाई समारोह संपन्न कराने की ठानी. यह सरकार का मनोबल तोड़ने की एक और कोशिश थी. उन्होंने इस भ्रम को झुठलाया कि अब प्रभावित क्षेत्रों में पत्रकार सुरक्षित नहीं हैं. पहले उन्होंने दोपहर 12 बजे का समय दिया और आख़िर में रात के आठ बजे ओसी के गले में बंदी का पट्टा लगाकर पत्रकारों को सौंपा गया.

यह एक संयोग था कि जिस दिन ओसी की रिहाई की कवायद चल रही थी, उसी दिन भाजपा से निकाले गए सांसद जसवंत सिंह एक संगोष्ठी में भाग लेने कोलकाता आए थे. बाद में एक पत्रकार के सवाल के जवाब में उन्होंने जैसे समस्या के मूल स्रोत का ही ख़ुलासा कर दिया. उनका कहना था कि हर थाना माओवाद की फैक्ट्री है. इसके पहले लालू प्रसाद ने भी बंगाल को नक्सलवाद की जन्मभूमि कहा था. पिछले साल नवंबर से पश्चिमी मिदनापुर में शुरू हुई नक्सली हिंसा में 82 माकपा कॉडर, दो कांग्रेसी और 29 पुलिसकर्मी मारे जा चुके हैं. 72 लोगों का अपहरण हुआ है, जिनमें दो पुलिसकर्मी भी शामिल हैं. इनका अब तक पता नहीं चल पाया है.

सच यह भी है कि राजनीतिक स्वार्थ माओवादियों की ढाल बनकर सामने आ रहा है. राज्य में ममता बनर्जी ने ओसी के अपहरण को सदमाकारी माना, उसकी निंदा नहीं की तो माकपा ने एक बार फिर आरोप लगाया कि तृणमूल व उनके बीच साठगांठ है. यक़ीन दिलाने के लिए माकपा वाले यह भी कह रहे हैं कि माओवादी हिंसा में अब तक एक भी तृणमूल कार्यकर्ता की जान नहीं गई है.

रही बात केंद्र की, तो उसका भी एक पैर आगे जाता है तो एक पैर पीछे. महाराष्ट्र के गढ़चिरौली में हुए नक्सली हमले के मुक़ाबले के लिए बहुप्रतीक्षित कड़े क़दम उठाने के रास्ते में विधानसभा चुनाव आड़े आ गए. कौन जानता है कि सरकार कल यह सोचे कि झारखंड विधानसभा चुनाव तक इन कड़े क़दमों को नरम ही रखा जाए. झारखंड में माओवादियों ने सब इंस्पेक्टर फ्रांसिस की हत्या कर अपने इरादे जता दिए हैं. रिहा होने के बाद ओसी अतींद्रनाथ दत्त छुट्टी लेकर अपने घर में सदमे से उबर रहे हैं और यह सोच भी रहे हैं कि नौकरी ज्वाइन की जाए या नहीं.

और, अगर सचमुच उन्होंने डर कर नौकरी नहीं ज्वाइन की, तो यह माओवादियों की एक बड़ी जीत होगी और वह दिन शायद पी चिदंबरम एवं बुद्धदेव भट्टाचार्य जैसे राजनेताओं को और शर्मसार कर देने वाला होगा.

feedback@chauthiduniya.com

अब मध्य प्रदेश भी चपेट में

संध्या पांडे

देश के विभिन्न नक्सल प्रभावित क्षेत्रों से भाग कर बड़ी संख्या में नक्सलवादी मध्य प्रदेश की सीमा में घुसपैठ करने के लिए तैयार हैं. गुप्तचर एजेंसियों की इस ख़बर की पुष्टि राज्य के सीमावर्ती ज़िलों में होने भी लगी है. सभी सीमावर्ती ज़िलों को पूरी तरह सतर्क कर दिया गया है और दिन-रात की चौकसी बढ़ा दी गई है.

देश के विभिन्न हिस्सों में केंद्र एवं राज्य सरकारों के दबाव से परेशान नक्सली मध्य प्रदेश को ख़ुद के लिए एक सुरक्षित जगह मान रहे हैं. राज्य सरकार को पिछले दिनों विभिन्न राज्यों एवं केंद्र सरकार से इस संभावित घुसपैठ के बारे में सूचना मिली थी. उसके बाद यहां के अनूपपुर, डिण्डौरी, मंडला, बालाघाट, सिवनी, छिंदवाड़ा और सिंगरौली आदि ज़िलों में सुरक्षा व्यवस्था कड़ी कर दी गई है. सूत्रों के अनुसार, मध्य प्रदेश का पुलिस बल नक्सलियों की किसी भी घुसपैठ को रोकने के लिए पूरी तरह से तैयार है.

उल्लेखनीय है कि मध्य प्रदेश में नक्सल गतिविधियां केवल बालाघाट ज़िले तक ही सीमित हैं. इसके अतिरिक्त अन्य किसी भी ज़िले में नक्सलियों को स्वयं के लिए कोई सुरक्षित स्थान नहीं मिल पाया है. हाल में ही पुलिस को मिली सूचना के अनुसार, 75 नक्सलियों का एक दल झारखंड से लगी हुई सिंगरौली ज़िले की सीमा के पास देखा गया है. नक्सलियों के इस दल ने सिंगरौली ज़िले के आसपास के गांवों में भोजन और सुरक्षा प्राप्त करने की कोशिशें की हैं. नक्सलियों का यह दल झारखंड से छत्तीसगढ़ के कोरबा और सरगुजा ज़िले से होता हुआ मध्य प्रदेश के मांडा गांव में प्रवेश करना चाहता है. मुख़बिरों से मिली सूचना के आधार पर 90 सशस्त्र जवानों की एक टुकड़ी सिंगरौली ज़िले के मांडा गांव भेज दी गई है. अभी तक किसी मुठभेड़ की सूचना नहीं मिली है.

मध्य प्रदेश के सबसे क़रीबी राज्य छत्तीसगढ़ में नक्सलियों का आतंक इन दिनों बहुत ज़्यादा है. उसके अतिरिक्त छत्तीसगढ़ से लगे हुए प्रांतों झारखंड और आंध्र प्रदेश में भी नक्सली वारदातें प्रतिदिन प्रकाश में आ रही हैं. केंद्र और राज्य सरकारों ने नक्सलियों के विरुद्ध एक संयुक्त ऑपरेशन शुरू किया है. बताया जाता है कि छत्तीसगढ़ में नक्सली प्रत्येक गांव से दस युवकों को अनिवार्य रूप से अपनी टोली में शामिल होने के लिए दबाव बना रहे हैं. कहीं-कहीं उन्हें आंशिक सफलता भी मिल रही है. मध्य प्रदेश अपने भूगोल के कारण नक्सलवादियों से अब तक अछूता रहा है. उन्हें यहां आम नागरिकों का न तो व्यापक समर्थन मिलता है और न ही उनके खाने और ठहरने की व्यवस्था हो पाती है.

पुलिस सूत्रों के अनुसार, राज्य का सुरक्षातंत्र नक्सलियों की किसी भी घुसपैठ को रोकने में पूरी तरह सक्षम और तत्पर है. राज्य सरकार भी विभिन्न प्रांतों की सरकारों एवं केंद्र सरकार से इस बारे में निरंतर संपर्क बनाए हुए है.

feedback@chauthiduniya.com

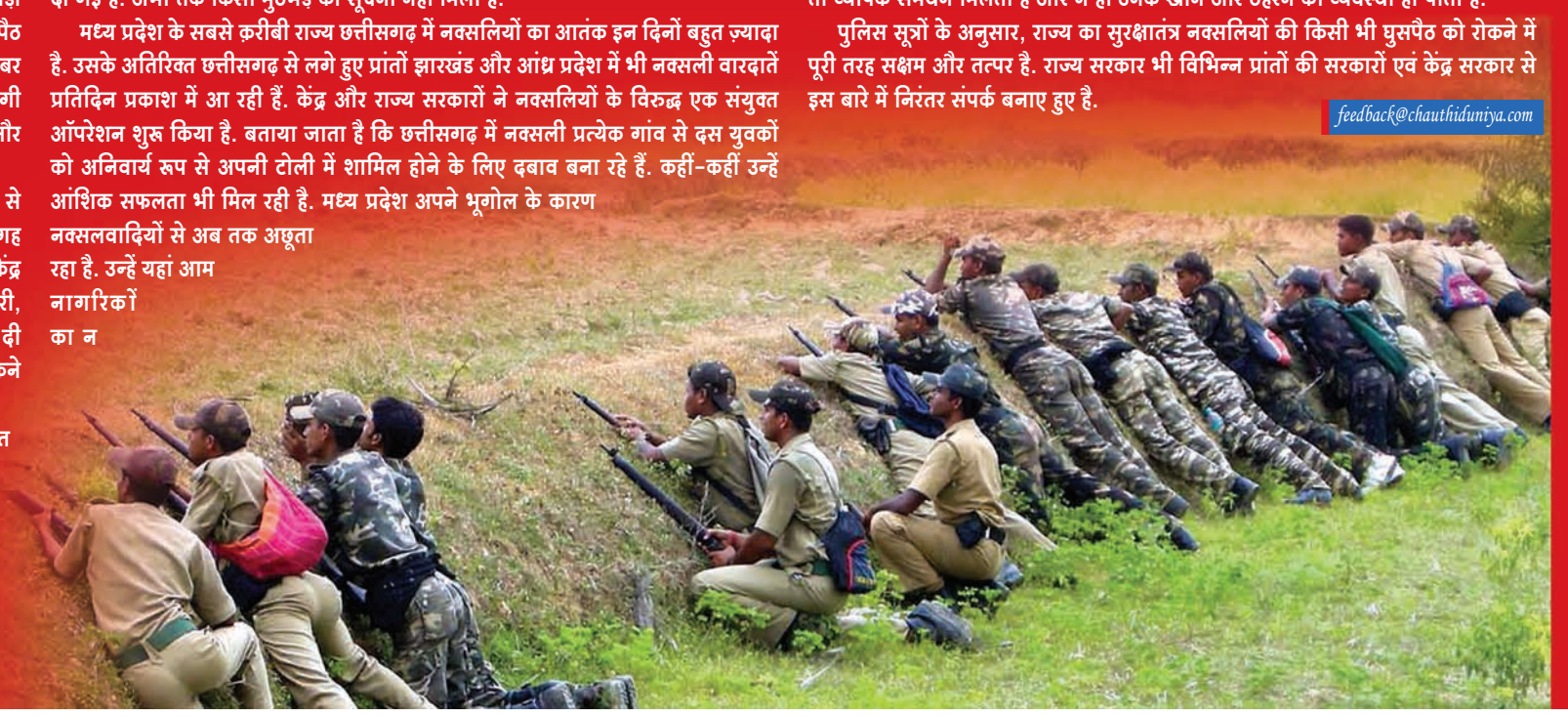

भाजपा अजीबोग़रीब स्थिति में फंस गई है. वह एक के बाद एक चुनाव हारती जा रही है. नेता आपस में लड़ रहे हैं. पार्टी चिंतित, भ्रमित, असंगठित, दिशाहीन और बिखरी नज़र आ रही है.

भाजपा एक कटी पतंग है?

मनीष कुमार

भाजपा एक ख़तरनाक दिशाहीनता की स्थिति में है और अपने विनाश की ओर दौड़ रही है. हैरानी की बात यह है कि दिल्ली में बैठे पार्टी नेताओं को गलतफ़हमी है कि इस कटी पतंग की डोर उनके हाथ में है और वे अपने हिसाब से पार्टी को चला रहे हैं.

भारतीय जनता पार्टी फिर बुरे कारणों की वजह से ख़बरों में हैं. चुनाव में हार और जीत होती रहती है, लेकिन भाजपा जीती बाजी को हारने का रिकॉर्ड बना रही है. महाराष्ट्र और हरियाणा के चुनाव नतीजे इस बात के सीधे सबूत हैं कि कैसे भाजपा ग़लत रणनीति की वजह से चुनाव हार गई. महाराष्ट्र की हार तो वाकई शर्मनाक है. किसान ख़ुदकुशी कर रहे हैं, ग़रीब भूख से मर रहे हैं, मज़दूर बेरोज़गार हो रहे हैं, महाराष्ट्र के शहर रहने लायक़ नहीं बचे हैं, युवा रोज़गार के लिए भटक रहे हैं, दस साल से चली आ रही कांग्रेस–एनसीपी की सरकार से जनता नाराज़ थी और उनके वोट बैंक में डाका डालने के लिए तीसरा मोर्चा भी था. इसके बावजूद भाजपा चुनाव हार गई. ऐसा ही कुछ हरियाणा में भी था. स्थिति भाजपा के लिए अनुकूल थी, लेकिन नतीजे भाजपा के ख़िलाफ़ आए. राजनाथ जी, अब इन राज्यों में मिली हार के लिए किसका सिर कलम करेंगे या मौन धारण कर लेंगे?

पिछले कुछ दिनों की घटनाओं से यह साफ़ हो गया है कि पार्टी चंद नेताओं की जागीर बन गई है. ऐसे माहौल में ज़मीन से जुड़े, सीधे–सादे, अविवादित और शालीन किस्म के नेताओं को पार्टी में घुटन होने लगी है. भाजपा से कई वरिष्ठ नेताओं के बयानों का सिलसिला थमने का नाम नहीं ले रहा है. वे मीडिया के ज़रिए राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से कह रहे हैं कि पार्टी की सर्जरी की ज़रूरत है. ज़्यादातर कार्यकर्ताओं और क्षेत्रीय नेताओं का भाजपा नेतृत्व से विश्वास उठ चुका है. इन लोगों को लगता है कि पार्टी को बचाने के लिए संघ को ही आगे आना पड़ेगा. इसकी वजह यह है कि जब से यशवंत सिन्हा, जसवंत सिंह और अरुण शौरी ने चुनाव में हार के लिए ज़िम्मेदार कौन का सवाल उठाया है, तब से पार्टी अंतहीन ख़ेमेबाज़ी में फंस गई. कौन, किसे, कहां और कब निशाने पर ले लेगा, यह किसी को पता नहीं. जिन्हें यह षड्यंत्रकारी राजनीति पसंद है, वे तो पार्टी की बैठकों और कार्यवाही में हिस्सा ले रहे हैं, लेकिन ज़्यादातर नेता निष्क्रिय हो गए हैं. हैरानी की बात है कि आडवाणी एंड कंपनी यह सुनने को भी तैयार नहीं है कि पार्टी में कुछ गड़बड़ी भी है. जो पार्टी की बीमारी का खुलासा करता है, पार्टी उसे ही बीमार घोषित कर देती है. फिर अनुशासन का डंडा दिखा कर उसे बेइज़्ज़त करने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी जाती. पार्टी में हिटलर और स्तालिन किस्म के लोगों का राज़ है. प्रजातांत्रिक मूल्यों को मानना तो दूर, भाजपा में आजकल फासीवाद का बोलबाला है.

महाराष्ट्र, हरियाणा और अरुणाचल प्रदेश में मिली हार के बाद भाजपा में दो महत्वपूर्ण घटनाएं हुईं. चुनाव आयोग ने झारखंड में चुनाव का ऐलान कर दिया और राजस्थान की नेता प्रतिपक्ष वसुंधरा राजे ने इस्तीफ़ा दे दिया. राजनाथ सिंह के ख़िलाफ़ युद्ध का ऐलान कर दिया. इस्तीफ़े के साथ तीन पेज का पत्र भी था, जिसका सार यह है कि वसुंधरा कोई मनोनीत नहीं, बल्कि विधायकों द्वारा चुनी हुई नेता प्रतिपक्ष हैं. फिर पार्टी ने किस आधार पर उन्हें हटाने का फ़ैसला लिया? और अगर यह फ़ैसला लिया भी गया तो उन्हें अपनी सफाई देने का मौक़ा क्यों नहीं दिया गया? राजस्थान के ही जसवंत सिंह के साथ भी यही हुआ था. शिमला में चिंतन बैठक के पहले ही दिन राजनाथ सिंह ने फोन पर ही उन्हें निष्कासित करने का फ़ैसला सुनाया था. उन्हें अपनी सफाई देने का मौक़ा नहीं दिया गया. अगर राजस्थान में हुई हार के लिए वसुंधरा ज़िम्मेदार हैं तो उत्तर प्रदेश और पूरे देश में लोकसभा चुनाव में मिली हार के लिए राजनाथ सिंह ने इस्तीफ़ा क्यों नहीं दिया? वसुंधरा राजे के इस्तीफ़े से तो यही समझा जा सकता है कि दिल्ली में बैठे भाजपा नेताओं के लिए पार्टी से ज़्यादा अपना अहंकार महत्वपूर्ण है. पार्टी गर्त में जा चुकी है. एक के बाद एक प्रत्येक चुनाव में भाजपा हार रही है, लेकिन दिल्ली से देश की राजनीति करने वाले नेताओं को इस बात की चिंता है कि प्रेस कांफ्रेंस के बाद पत्रकारों को बांटे जा रहे पर्चे के नीचे हस्ताक्षर किसका है.

भारतीय जनता पार्टी के नेता शायद समय को कोसते होंगे कि एक चुनाव खत्म होता नहीं कि दूसरा सिर पर आ जाता है. झारखंड चुनाव का ऐलान भी ऐसे वक़्त हुआ है, जब रांची में यशवंत सिन्हा कुंडली मारकर बैठे हैं. दिल्ली में बैठे नेताओं की कृपा से बाबूलाल मरांडी जैसे कई नेता या तो पार्टी छोड़ चुके हैं या निष्क्रिय बैठे हैं. यशवंत सिन्हा के सवालों का जवाब राजनाथ सिंह या आडवाणी एंड कंपनी अब तक नहीं दे पाई है. लोकसभा चुनाव में हार के लिए ज़िम्मेदार कौन है, यह सवाल यक्ष प्रश्न की तरह अब भी संगठन के सामने खड़ा है.

झारखंड के चुनाव की घोषणा होने के बाद दिल्ली के एयरकंडीशन कमरों में बैठे नेताओं को भी पसीना आ रहा है कि इस चुनाव से कैसे निपटा जाए. केंद्रीय नेतृत्व के पास न तो पार्टी को संगठित करने का हौसला है और न ही वक़्त. ऐसे में स्थानीय स्तर के नेता अपनी मनमानी करने से नहीं चूकते. ख़बर यह है कि भाजपा ने झारखंड में एक आंतरिक सर्वेक्षण करवाया, लेकिन इसमें भी बहुत बड़ी घपलेबाजी हुई. कई नेताओं ने सर्वे करने वाली एजेंसी को घूस देकर अपना नाम मुख्यमंत्री पद की दौड़ में शामिल करवा लिया. अब दिल्ली में बैठे नेता इतनी भी हिम्मत नहीं कर पा रहे हैं कि वे पार्टी में मौजूद ऐसे फर्जी लोगों के ख़िलाफ़ कार्रवाई कर सकें.

भाजपा अजीबोग़रीब स्थिति में फंसी नज़र आ रही है. पार्टी एक के बाद एक चुनाव हारती जा रही है. नेता आपस में लड़ रहे हैं. भारतीय जनता पार्टी चिंतित, भ्रमित, असंगठित, दिशाहीन और बिखरी नज़र आ रही है. महाराष्ट्र, हरियाणा और अरुणाचल प्रदेश में परास्त होने के बाद और भाजपा के भीतर चल रहे गृहयुद्ध के बाद तो दिल्ली में कोई यह सोचने वाला भी नहीं बचा है कि पार्टी की साख कैसे बचाई जाए, विचारधारा में किस तरह के बदलाव लाए जाएं, संगठन में सुधार हो तो कैसे हो या फिर पार्टी को टूटने से कैसे बचाया जाए. कार्यकर्ता पूरी तरह मायूस हो चुके हैं. दिल्ली में भाजपा मुख्यालय में सक्रिय कार्यकर्ता तो यहां तक कह रहे हैं कि लगता है मानो कांग्रेस ने भाजपा में कुछ बड़े–बड़े एजेंट बैठा दिए हैं. वे पार्टी को उस हाल में पहुंचा देंगे कि अगले 20 साल तक कांग्रेस बिना किसी विरोध के देश पर राज करेगी.

चुनाव में हार और जीत कोई बड़ी बात नहीं है, लेकिन वाकओवर देना ज़रूर हैरान करता है. भाजपा के पास बड़े–बड़े रणनीतिकार हैं, जो अपना लोहा कई बार मनवा चुके हैं. वे कहां है? कहीं ऐसा तो नहीं कि भाजपा ने अब भगवान भरोसे चुनाव लड़ने की नई रणनीति बनाई है.

संभव है कि वह यह मान बैठी हो कि जनता तो कांग्रेस सरकार के ख़िलाफ़ है ही, वह कांग्रेस के विरोध में वोट डालेगी तो भाजपा कुछ किए बिना ही जीत जाएगी. भाजपा संगठन की समस्या से अलग कुछ सोच ही नहीं पा रही है. पार्टी के नेता बस इसी दिमागी कसरत में लगे हुए हैं कि राजनाथ सिंह का कार्यकाल खत्म होगा तो उनकी जगह कौन लेगा और आडवाणी जी के बाद पार्टी का चेहरा कौन होगा. अब तक पार्टी में जो हुआ है वह तो ट्रेलर है, फिल्म अभी बाकी है.

manish@chauthiduniya.com

चहेतों को लालबत्ती, जनता को ठेंगा

राजकुमार शर्मा

सूबे की ख़स्ता हालत के बावजूद निशंक सरकार ने विभिन्न पदों पर पार्टी के वफ़ादारों का मनोनयन करके ख़ुद अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारने का काम कर लिया. नतीजतन, वह अंदरखाने और बाहर, दोनों ही जगह आलोचना की शिकार बन रही है.

मुख्यमंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक ने दीपावली की पूर्व संध्या पर पच्चीस विधायकों, पूर्व सांसदों एवं वफ़ादारों को लालबत्ती का उपहार बांटकर अपने पिटारे की दूसरी खेप पूरी कर दी. निशंक ने इससे पहले पार्टी के सात सदस्यों का मनोनयन सभा सचिव के रूप में किया था. लालबत्ती के इस वितरण के बाद राज्य सरकार पार्टी के अंदर और बाहर आलोचना के घेरे में आ गई है.

इस बार कई दिग्गज नेता मलाईदार कुर्सी हथियाने में कामयाब रहे. मुख्यमंत्री ने मनोहरकांत ध्यानी, पूरन चंद शर्मा, वंशीधर भगत, अनिल नौटियाल एवं सुरेंद्र सिंह जीना को उनके वजन का ख्याल रखते हुए उन्हें मनचाहे विभागों का सर्वेसर्वा बनाया. निशंक अपने वफ़ादारों पर भी मेहरबान दिखे. पूर्व सांसद एवं कांग्रेस में दाग़ी मंत्री रहे टीपीएस रावत का नाम भी इस बार सूची में शामिल किया जा रहा था, किंतु ऐन वक़्त पर उनका नाम काट दिया गया. कई पुराने चेहरों की छुट्टी कर दी गई. जानकारों का कहना है कि इस बार लालबत्ती के खेल में पूरी तरह से संघ की मर्जी ही चली. मनोहरकांत ध्यानी को योजना आयोग का उपाध्यक्ष, पूरन चंद्र शर्मा को मंडी समिति का अध्यक्ष, बलराज पासी को बागवानी बोर्ड का अध्यक्ष, नरेश बंसल को आवास विकास परिषद का अध्यक्ष, अजय भट्ट को ग्रामीण स्वास्थ्य सलाहकार परिषद का उपाध्यक्ष, तीरथ सिंह रावत को आपदा प्रबंधन सलाहकार समिति का उपाध्यक्ष और गोविंद कोरंगा को बाल विकास बोर्ड का उपाध्यक्ष बनाया गया है. विधायकों में बंशीधर भगत को बीस सूत्रीय कार्यक्रम क्रियान्वयन समिति का उपाध्यक्ष और अनिल नौटियाल को जीएमबीएन का अध्यक्ष बनाया गया है.

फोटो – प्रभात पाण्डेय

पूर्व विधायक नारायण सिंह राणा को स्पोर्ट्स कंट्रोल बोर्ड का अध्यक्ष, ज्ञान सिंह नेगी को राज्य औद्योगिक सलाहकार समिति का उपाध्यक्ष, प्रेम बुड़ा कोटी को खादी बोर्ड का उपाध्यक्ष, श्यामवीर सैनी को उद्यमिता सलाहकार समिति का उपाध्यक्ष, मजहर अली नकवी को अल्पसंख्यक आयोग का उपाध्यक्ष, डॉ. बालेश्वर पाल को उच्च शिक्षा उन्नयन समिति का अध्यक्ष, ज्योति गैरोला को वन विकास निगम का अध्यक्ष, किशन पुनेठा को राज्य जैविक उत्पाद परिषद का उपाध्यक्ष, चमनलाल वाल्मीकि को मत्स्य पालन विकास परिषद का उपाध्यक्ष, अनुसूया प्रसाद भट्ट को बदरी–केदार मंदिर समिति का उपाध्यक्ष, विजय मंडल को बहुउद्देशीय वित्त विकास निगम का उपाध्यक्ष, मोहन लाल बौठियाल को जलागम समिति में उपाध्यक्ष, पंकज सहगल को वाणिज्य कर सलाहकार समिति का अध्यक्ष और सूरत नौटियाल को चार धाम विकास परिषद का उपाध्यक्ष बनाया गया है.

कभी नारायण दत्त तिवारी सरकार को लालबत्ती के मुद्दे पर घेरने वाली भारतीय जनता पार्टी इस बार ख़ुद अपने ही मकड़जाल में फंसती नज़र आ रही है. सूबे की कमज़ोर माली हालत को नज़रअंदाज़ करके जिस तरह लालबत्ती वितरण के ज़रिए सरकारी खजाने पर भारी भरकम बोझ डाला गया है, उसके औचित्य को लेकर भाजपा के अंदर एवं बाहर ख़ासी सुगबुगाहट हो रही है, जिसकी क़ीमत देर–सबेर पार्टी को चुकानी पड़ सकती है. यही नहीं, भाजपा के मिशन 2012 को भी इससे धक्का लग सकता है. निशंक ने पहले चरण में जिन सात लोगों को लालबत्ती से नवाज़ा, उन्हें संसदीय सचिव का पदनाम दिया गया है. इन संसदीय सचिवों को निशंक ने जिस तरह मंत्रियों के साथ संबद्ध करने की बात कही, उसे लेकर जितने मुंह उतनी बातें हो रही हैं.

जानकारों का कहना है कि संसदीय सचिव पद के लिए शपथ ग्रहण राज्यपाल द्वारा कराया जाना चाहिए था. और तो और, जानकारों का यह भी मानना है कि संसदीय सचिव का पद एवं शपथ ग्रहण दोनों ही असंसदीय है.

सरकार ने पहली बार इस तरह का पद सृजित करके अपने चहेतों को लालबत्ती की रेवड़ी बांटी. इस पद पर गोबिंद लाल शाह, अरविंद पाण्डेय, प्रेमचंद्र अग्रवाल, गोपाल सिंह रावत, चंदन राम दास, दीवान सिंह विष्ट और आशा नौटियाल को मनोनीत किया गया. सरकार के इस फ़ैसले ने प्रतिपक्ष कांग्रेस एवं बसपा को घर बैठे एक मुद्दा थमा दिया है. नेता प्रतिपक्ष हरक सिंह रावत कहते हैं कि यह एक जन विरोधी सरकार है. इसने जनता का ध्यान किए बिना लोगों को लालबत्ती से लैस करके अपने जन विरोधी होने का प्रमाण प्रस्तुत किया है. उत्तराखंड संस्कृत विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति, जयराम संस्थाओं के अध्यक्ष एवं दिग्गज कांग्रेसी नेता ब्रह्मस्वरूप ब्रह्मचारी ने कहा कि निशंक सरकार संघ के हाथ का झुनझुना है, जिसके शासनकाल में जनता की भलाई पर कम और भाजपा की समृद्धि पर अधिक ध्यान दिया जाएगा. पूर्व मंत्री इंदिरा हृदयेश कहती हैं कि इस तरह लालबत्ती की बंदरबांट प्रदेश की जनता के साथ विश्वासघात है.

प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष यशपाल आर्य का कहना है कि निशंक सरकार का असली और जन विरोधी चेहरा सौ दिनों बाद ही जनता के सामने आ गया है. उधर राज्य की जनता भी हैरान है कि जिस बुराई से खंडूरी सरकार अपने दो वर्ष के कार्यकाल में बचती रही, उसे सौ दिन में ही डॉ. निशंक ने जनहित को नकारते हुए कैसे स्वीकार कर लिया.

feedback@chauthiduniya.com

कोई नेता, अधिकारी, ठेकेदार या ग़ैर सरकारी संगठन बिना अनुमति के गांव में नहीं आ सकता और न ही कोई कार्यक्रम चला सकता है.

हमारा गांव, हमारी सरकार

मेंढा (महाराष्ट्र) में आप गांधी के ग्राम स्वराज के सपने को पूरा होते देख सकते हैं. बहुमत का सिद्धांत यहां आकर बिख़र जाता है. यहां 49 पर 51 भारी नहीं पड़ते. यहां के लोगों के लिए सरकार का मतलब दिल्ली और मुंबई में बैठे चंद नेता नहीं, बल्कि उनकी अपनी सरकार है. यानी जनता की, जनता के लिए और जनता द्वारा असली सरकार.

शशि शेखर

दिल्ली और मुंबई में हमारी सरकार है, लेकिन हमारे गांव में तो हम ही सरकार हैं. इसलिए अपने विकास के लिए पैसा तो हम सरकार से ही लेंगे, लेकिन उन पैसों का इस्तेमाल कहां और कैसे करना है, यह हम ख़ुद तय करेंगे. यह मानना है, महाराष्ट्र के गढ़ चिरौली ज़िले के मेंढा (लेखा) गांव के लोगों का. इस गांव ने सामूहिक निर्णय लेने की जिस प्रक्रिया का विकास किया है, वह अद्‌भुत है. अनुकरणीय है. आधुनिक लोकतंत्र में बहुमत और अल्पमत की अवधारणा के ठीक उलट यह गांव सर्वमत या कहे पूर्ण सहमति के सिद्धांत को अपना कर आगे बढ़ रहा है. यानि किसी भी मामले में अंतिम निर्णय तक पहुंचने के लिए गांव के हर एक आदमी की सहमति आवश्यक है. गांव में शराबबंदी लागू है. न कोई शराब बेचता है, न पीता है. अगर कोई बाहर से शराब पी कर आए और गांव में ग़लत हरक़त करते पकड़ा जाए, तो उस पर जुर्माना लगाया जाता है. ऐसे ही, बिना ज़रूरत जंगल से पेड़ काटने पर भी जुर्माना देना पड़ता है. कोई नेता, अधिकारी, ठेकेदार या ग़ैर सरकारी संगठन बिना अनुमति के गांव में नहीं आ सकता और न ही कोई कार्यक्रम चला सकता है.

मेंढा गांव धनोडा तहसील के लेखा पंचायत क्षेत्र में आता है. आदिवासी बहुल इस गांव में गोंड आदिवासियों के 84 परिवार है (2007 तक , जनसंख्या 734). लेखा पंचायत की एक ग्राम सभा होने के बावजूद मेंढा गांव की अपनी एक अलग सभा है, जिसे गांव–समाज सभा के नाम से जाना जाता है. और यही वो संस्था है, जिसने मेंढा (लेखा) को एक अलग और नई पहचान दी है. गांव–समाज सभा का अपना एक अध्ययन केंद्र भी है, जहां गांव के लोग बैठ कर किसी मुद्दे पर विचार–विमर्श करते हैं, साथ ही उस मुद्दें का गहन अध्ययन भी किया जाता है. 1996 से ही गांव–समाज सभा में ग्राम विकास से जुड़े मुद्दों पर फ़ैसले लिए जा रहे है. सभा में गांव के सभी पुरुष और महिलाएं शामिल हैं. हालांकि, शुरू–शुरू में महिलाएं गांव–समाज सभा की बैठकों में नहीं आती थीं. वजह, शराब. महिलाओं का कहना था कि मर्द शराब पी कर बैठक में आते हैं, उन्हें होश नहीं रहता कि क्या बोलना है. तब गांव वालों ने मिल कर ये तय किया कि गांव में शराबबंदी लागू की जाए. लेकिन यह इतना आसान नहीं था. शराब पीने वालों को समझाना मुश्किल था. सो, शराब बनाने वाले लोगों को इकट्ठा कर उन्हें शराब बेचने से होने वाले फ़ायदे और घाटे के बारे में समझाया गया. उन्हें बताया गया कि शराब बेचने से तो 4 या 5 लोगों का ही फ़ायदा हो रहा है, लेकिन शराब पीने से पूरे गांव का नुक़सान हो रहा है. शराब बेचने वालों को बात समझ में आ गई.

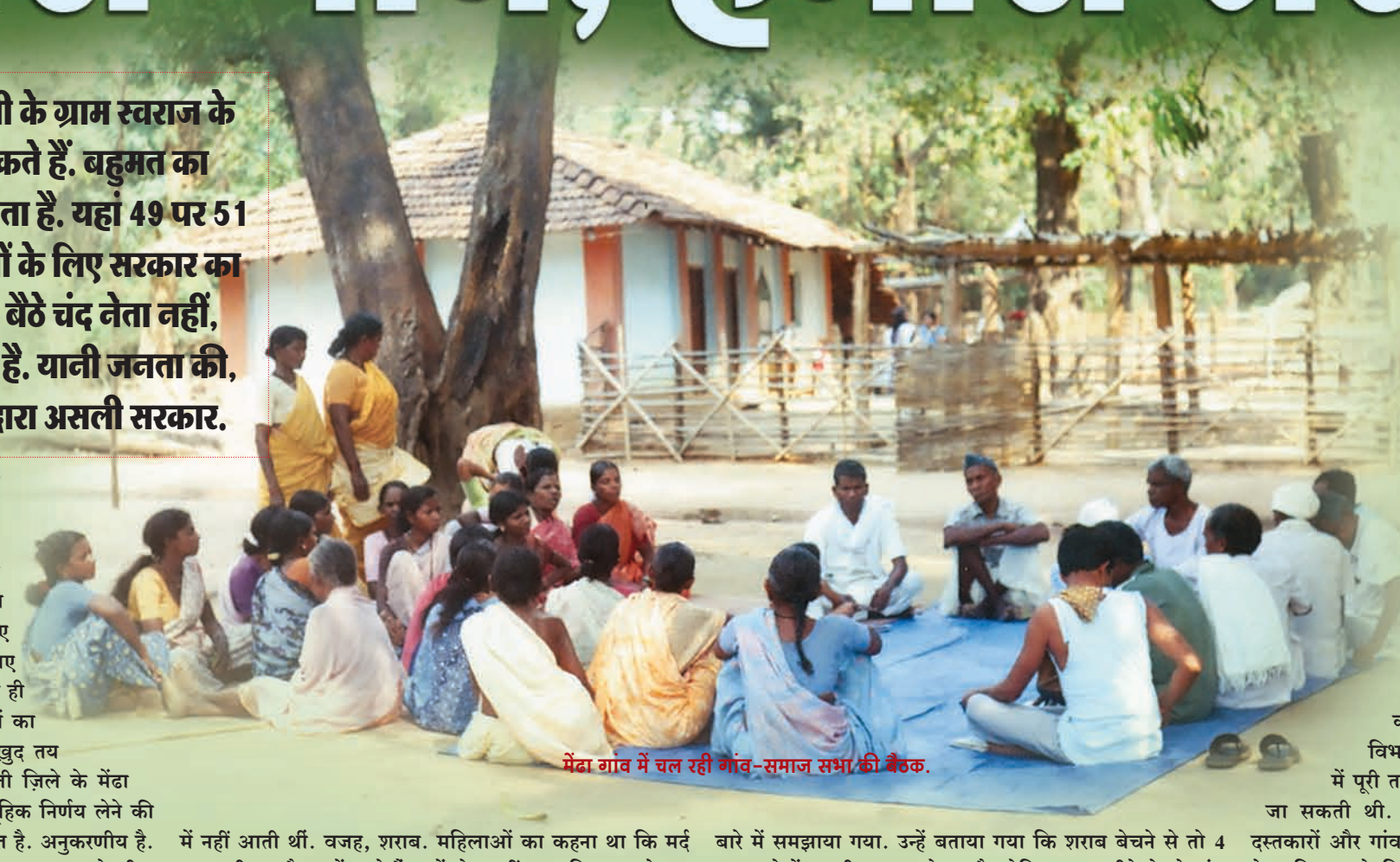

मेंढा गांव में चल रही गांव–समाज सभा की बैठक.

गोतुल आदिवासियों की ऐसी संस्था थी, जहां युवा आदिवासी लड़के-लड़कियों को जीवन से जुड़ी शिक्षा दी जाती थी, लेकिन दबंग ग़ैर आदिवासियों ने अफ़वाहें फैला कर इसे बंद करवा दिया. जब गांव-समाज सभा ने महसूस किया कि गोतुल एक स्वस्थ परंपरा थी, तो उसे फिर से शुरू करने का फ़ैसला लिया गया है.

आज गांव में शराब का बनना और बिकना दोनों बंद हो चुका है. सतपुड़ा के जंगल के बीच बसे मेंढा के निवासियों के जीवनयापन का मूल आधार जंगल ही है. 1950 में सरकार ने इन आदिवासियों के पारंपरिक अधिकार, जिसे निस्तार कहा जाता था, को मान्यता दे दी और सभी गांवों के लिए एक रिकॉर्ड (निस्तार पत्रक) भी बनवाया. यह एक राजस्व दस्तावेज की तरह था, जो पटवारी के पास होता था. लेकिन कुछ समय बाद वन विभाग ने कहना शुरू किया कि लोगों के निस्तार पत्रक को ख़त्म किया जा रहा है. गांव वालों ने संगठित होकर वन विभाग का विरोध करना शुरू कर दिया. अब वन विभाग और गांव वाले संयुक्त रूप से जंगल की देखभाल की ज़िम्मेदारी वहन कर रहे हैं.

यह पूरा इलाक़ा पेपर मिल्स के लिए फ़ायदेमंद माना जाता है. जंगल में प्रचुर मात्रा में बांस उपलब्ध हैं. सरकार ने बांस की कटाई के लिए पेपर मिल्स को औने–पौने दामों में लीज दे दिया था. पेपर मिल्स को उन इलाक़ों में भी बांस कटाई की अनुमति मिल गई थी, जहां गांव वालों के निस्तार अधिकार थे. 1991 में लीज ख़त्म होने पर गांव–समाज सभा ने मुख्यमंत्री को पत्र लिख कर लीज नहीं बढ़ाने का अनुरोध किया. गांव वालों का कहना था कि बिना हमारी सहमति के बांस की कटाई नहीं होनी चाहिए. लेकिन सरकार ने एक बार फिर नया लीज ज़ारी कर दिया. लेकिन इस बार गांव वालों ने पेपर मिल्स को बांस काटने से रोकने के चिपको आंदोलन शुरू कर दिया. लेखा पंचायत के सरपंच की बात भी नहीं सुनी गई. पेपर मिल्स वालों ने गांव वालों के बीच फूट डालने की कोशिश की. पुलिस में जाने और क़ानूनी कार्रवाई की धमकी दी गई. लेकिन इस सब का कोई असर नहीं हुआ. अंत में, गांव वालों ने बीच का रास्ता निकाला. प्लान के मुताबिक़ वन विभाग और संयुक्त वन प्रबंधन समिति की देखरेख में पूरी तरह से विकसित हो चुके बांसों की कटाई की जा सकती थी. और सबसे पहले इसकी सप्लाई किसानों, दस्तकारों और गांववालों को देना था. इसके बाद, बचे हुए बांस पेपर मिल्स को दिए जा सकते थे. तीन साल के संघर्ष के बाद सरकार ने इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया. गांव–समाज सभा जंगल की रक्षा के लिए हर संभव क़दम उठाने को तैयार रहती है. शहद निकालने के पारंपरिक तरीक़े को यहां के लोगों ने छोड़ दिया है. क्योंकि आग लगा कर शहद निकालने से मधुमक्खियों को भी नुक़सान पहुंचता है. अब वैज्ञानिक तरीके से शहद निकाला जाता है. इस प्रक्रिया में मधुमक्खी के छत्ते को कोई नुक़सान नहीं होता.

गांव की तस्वीर और तक़दीर बदलने वाले मोहन हीरा लाल और देवाजी टोफा (दायें).

इसके अलावा गांव–समाज सभा ने अपनी सांस्कृतिक विरासत गोतुल को भी पुनर्जीवित किया है. गोतुल आदिवासियों की एक ऐसी संस्था थी, जहां जवान आदिवासी लड़के–लड़कियों को जीवन से जुड़ी अनौपचारिक शिक्षा दी जाती थी. साथ ही यह सांस्कृतिक गतिविधियों का भी केंद्र था. लेकिन गांव के दबंग ग़ैर आदिवासियों ने इसे ग़लत बताकर अफ़वाहें फैलानी शुरू कर दी. धीरे–धीरे गोतुल प्रथा बंद होने लगी थी, लेकिन जब गांव–समाज सभा ने यह महसूस किया कि गोतुल आदिवासियों की एक स्वस्थ परंपरा थी, तो उसे फिर से शुरू करने का फ़ैसला लिया गया. गांव–समाज सभा की एक और ख़ासियत है. और वो है, नेता विपक्ष. यानि, गांव–समाज सभा में एक नेता विपक्ष भी होता है. नेता विपक्ष गांव का ही एक आदमी होता है, जो गांव–समाज सभा में आए हरेक प्रस्ताव का विरोध करता है. बावजूद इसके, गांव वाले इस व्यक्ति को दुश्मन नहीं अपना दोस्त समझते हैं. इसकी भी एक वजह है. नेता विपक्ष ही वह व्यक्ति है, जो सभा में लाए गए प्रस्तावों में गलतियां ढूंढ़ता है और सभा को इसके बारे में सूचित करता है.

इस गांव में आने के बाद आप गांधी के ग्राम स्वराज के सपने को पूरा होते देख सकते हैं. बहुमत का सिद्धांत यहां आ कर बिख़र जाता है. यहां 49 पर 51 भारी नहीं पड़ते. मेंढा के लोगों ने विकास के लिए सरकार का मुंह ताकने के बजाए ख़ुद पर ज़्यादा भरोसा किया है. यानि, यहां के लोगों के लिए सरकार का मतलब दिल्ली और मुंबई में बैठे चंद नेता नहीं है. यहां के लोगों की ख़ुद की एक सरकार है और सचमुच, यहीं चलती है असली सरकार. जनता की, जनता के लिए और जनता के द्वारा.

feedback@chauthiduniya.com

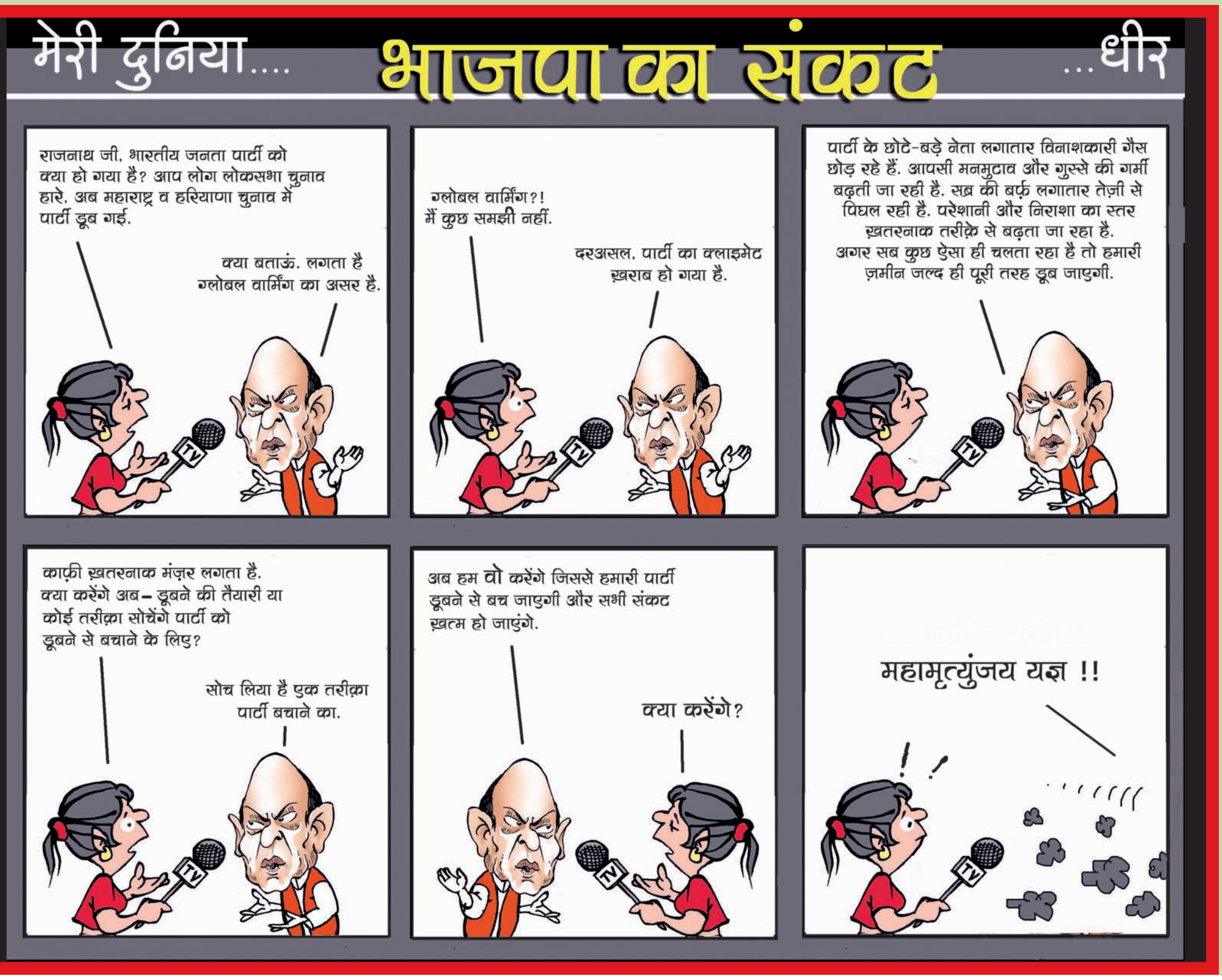

दिसंबर 1995 से मार्च 1996 तक 18 प्रांतों के क़रीब 66 छात्र नवलगढ़ में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे थे. कैंपस प्लेसमेंट भी यहां होने लगा था. शेखावटी के सैकड़ों युवा इस व्यवसाय से जुड़ने लगे थे.

साकार हुआ सपना

आदमी चाहे तो क्या नहीं कर सकता है! बस ज़रूरत उस हौसले की है, जो चाहत को परवान चढ़ा दे. नवलगढ़ में यही हुआ. मोरारका फाउंडेशन के संरक्षण तले यहां के युवाओं ने वह काम किया, जिसने न सिर्फ़ लोगों का शहर की ओर पलायन थमा, बल्कि सुदूर प्रांतों के भी सैकड़ों हाथ हुनरमंद हो गए.

उमाशंकर मिश्र

नवलगढ़ के 13 वर्षीय संजय सालतसर की मां ने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि उनके बेटे के कंधों पर इतनी जल्दी ज़िम्मेदारियों का पहाड़ टूट पड़ेगा. बात 1993 की है, जब एक दुर्घटना में संजय के पिता असहाय हो गए और उसकी बड़ी बहन उसे नवलगढ़ के डायमंड ट्रेनिंग सेंटर में लेकर गई थी. मां ने यह सोचकर भेजा था कि बेटा काम सीख लेगा तो घर का ख़र्च चल जाएगा. पांच बहनों की शादी और दो छोटे भाइयों को अपने पैरों पर खड़ा करने की ज़िम्मेदारी संजय के कंधों पर आ पड़ी थी. नवलगढ़ में रहकर संजय ने काम सीखा और कमाने के लिए जयपुर की एक हीरा प्रोसेसिंग इकाई में काम करने लगा.

बाल मन कभी-कभी विचलित हो जाता था. एक दिन संजय जयपुर से वापस घर भाग आया. समझाने-बुझाने के बाद वह फिर जयपुर लौट गया. अब वह हर महीने ढाई से तीन हज़ार रुपये कमाने लगा था. कुछ समय बाद उसे सूरत जाने का मौक़ा मिला

और उसकी आमदनी बढ़कर साढ़े सात हज़ार रुपये मासिक हो गई. संजय की मां बताती हैं कि इस काम से जुड़कर संजय ने बहन की शादी और छोटे भाई को एमबीए कराने जैसे दायित्वों को तो पूरा किया ही, नवलगढ़ लौटकर उसने एक छोटी-सी सेमी ऑटोमेटिक डायमंड प्रोसेसिंग मशीन लगा ली है, जिसमें उसके अलावा तीन अन्य लोग भी काम करते हैं. संजय अपने घर-परिवार के साथ रहकर 15 हज़ार रुपये मासिक कमा लेता है, जबकि साथ काम करने वाले दूसरे कारीगर भी क़रीब छह से सात हज़ार रुपये कमा लेते हैं. संजय को हीरों के कारोबार के लिए विख्यात दक्षिण अफ़्रीका से नौकरी के ऑफर भी मिल रहे हैं. बरसात की अनियमितता के चलते राजस्थान के शेखावटी अंचल में खेतीबाड़ी पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ रहा था. स्थानीय लोगों की मानें तो चार साल में औसतन यहां मात्र एक फ़सल होती थी. दूरदराज की ढाणियों और गांवों में बसे किसान परिवारों का जीवनयापन मुश्किल हो गया था, जिसका सीधा असर रोज़गार की तलाश में बड़े शहरों की ओर पलायन के रूप में देखने को मिल रहा था. गांव और कस्बे ख़ाली होने लगे तो सामाजिक सरोकारों से जुड़े कुछ लोगों का ध्यान इस समस्या की ओर आकर्षित हुआ. शेखावटी के गंवई परिवेश के किसानों में जैविक खेती को लोकप्रिय बनाने वाली संस्था मोरारका फाउंडेशन के निदेशक मुकेश गुप्ता ने क्षेत्र भ्रमण के दौरान पलायन की पीड़ा को क़रीब से समझने का प्रयास किया. उल्लेखनीय है कि मोरारका फाउंडेशन न केवल शेखावटी, बल्कि राजस्थान के विभिन्न इलाक़ों में किसानों को जैविक खेती से जोड़ने के प्रयास में काफी कृषिगत अनुभव बटोर चुका था. मुकेश गुप्ता ने यह अनुभव किया कि शेखावटी जैसे सूखाग्रस्त इलाक़े में केवल कृषि के भरोसे लोगों का जीवनयापन संभव नहीं है. उन्होंने सोचा कि यदि स्थानीय लोगों को कोई वैकल्पिक रोज़गार मिल जाए तो काम बन जाएगा. लेकिन वैकल्पिक रोज़गार क्या हो सकता है, इसे निर्धारित करना आसान नहीं था. नवलगढ़ डायमंड कटिंग इंडस्ट्री के संचालक मदन पुरी कहते हैं कि किसी भी प्रकार की इंडस्ट्री की स्थापना का आधार मुख्यत: तीन बातों-उपभोक्ता, कच्चे माल की उपलब्धता और कौशल पर केंद्रित होता है. रेतीली भूमि वाले शेखावटी के ग्रामीण अंचल में ऐसी कोई संभावना नहीं दिखाई पड़ रही थी. यहां न तो कच्चा माल मिल सकता था और न ही उपभोक्ताओं की क्रय क्षमता के आधार पर किसी इंडस्ट्री को लगाने का जोख़िम उठाया जा सकता था. ऐसे में एक ही विकल्प बचता था कि कौशल आधारित किसी ऐसे उद्यम की स्थापना की जाए, जिससे युवाओं को काम सिखाकर उन्हें स्थानीय स्तर पर ही रोज़गार उपलब्ध कराया जा सके. यह काम रेत में दूब उगाने के समान था. ऐसा कौन-सा व्यवसाय हो सकता है, जिसमें महारत हासिल करके बेरोज़गार आत्मनिर्भर बन सकते थे? इस बात को लेकर विचार मंथन शुरू हो गया. एक दिन मुकेश गुप्ता नवलगढ़ में अपने किसी परिचित के यहां बैठे बातचीत कर रहे थे. उसी दौरान उन्होंने पूछ लिया कि आपका बेटा क्या करता है. जवाब में उन महाशय ने अपने बेटे मदन पुरी गोस्वामी का ज़िक्र किया, जो उस समय जयपुर में डायमंड कटिंग एंड पालिशिंग के व्यवसाय से जुड़ा हुआ था. वहीं से मुकेश के दिमाग़ में नवलगढ़ में डायमंड ट्रेनिंग सेंटर स्थापित करने का विचार कौंधा और जयपुर लौटकर इस संबंध में उन्होंने मदन पुरी से मिलकर अपनी योजना उन्हें बताई.

मदन पुरी तब तक सूरत और फिर जयपुर में रहकर हीरा व्यवसाय में काफी ख्याति अर्जित कर चुके थे. उस दौरान वह जयपुर में एक स्थापित डायमंड ट्रेनिंग सेंटर का संचालन कर रहे थे. मुकेश ने जब उनसे नवलगढ़ जैसे छोटे से क़स्बे में डायमंड ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट खोलने की बात कही तो उन्हें थोड़ा अटपटा-सा लगा. वह सोचने लगे कि जयपुर से स्थापित कारोबार को छोड़कर दूरदराज़ के ग्रामीण इलाक़े में आख़िर यह संस्थान क्या चल पाएगा? काफी सोच विचार के बाद उन्होंने यह आग्रह स्वीकार कर लिया. फिर क्या था, नवलगढ़ में मार्च 1994 में डायमंड ट्रेनिंग सेंटर की नींव मोरारका फाउंडेशन के सहयोग से रख दी गई.

ऐसा नहीं था कि पहले लोगों को आत्मनिर्भर बनाने के प्रयास नहीं किए गए थे. मदन पुरी बताते हैं कि एक दिन में यह विचार नहीं आया. यहां आसपास के क़रीब 20 गांवों में लोगों के आर्थिक एवं सामाजिक स्तर को ध्यान में रखकर सर्वेक्षण किया गया. पता चला कि कुछ लोगों को छोड़कर अधिकतर का जीवन स्तर संतोषजनक नहीं था, जिसके चलते पलायन की दर बहुत तेज़ी से बढ़ रही थी. यह सही है कि शेखावटी के कई लोगों ने बाहर जाकर काफी नाम और पैसा कमाया है, लेकिन आम आदमी के लिहाज़ से यह व्यवहारिक नहीं माना जा सकता था, क्योंकि यह एक दिन की प्रक्रिया का प्रतिफल नहीं था. बल्कि, कई पीढ़ियों के प्रयास से शेखावटी की माटी से पैदा बिरला, डालमिया, बजाज और मित्तल जैसे नाम स्थापित हुए थे. लोगों को आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में सबसे पहले सरकंडों की मूज से जेवड़ी बनाने का काम शुरू किया गया. दरियां, टेराकोटा के खिलौने, मेटल के खिलौने और नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ फैशन टेक्नोलॉजी के सहयोग से ऊनी वस्त्र निर्माण के काम को भी आज़माया जा चुका था, लेकिन बहुत अधिक सफलता इससे नहीं मिल रही थी. इसी कड़ी में डायमंड कटिंग का काम भी शुरू किया गया.

बकौल मदन पुरी गोस्वामी, दूध देने वाला पशु कितना दुधारू है, यह देखना पड़ता है. हर इंडस्ट्री की अपनी चुनौतियां हैं, लेकिन डायमंड कटिंग का काम जरा हटकर है. कोर्स तैयार करते समय अन्य संस्थानों की तरह दो-तीन साल के लंबे एवं उबाऊ पाठ्यक्रम न हों, इस बात का ध्यान रखा गया. तीन महीने एवं छह महीने के पाठ्यक्रम तैयार किए गए. संस्थान के विशेषज्ञों एवं प्रशिक्षकों की मेहनत रंग लाई और पहला बैच छह माह में प्रशिक्षित हो गया. जहां तक फीस की बात थी तो स्थानीय प्रशिक्षुओं से किसी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जाता था, बल्कि उन्हें कुछ राशि प्रोत्साहन स्वरूप दी जा रही थी. जबकि अन्य राज्यों से आने वाले छात्रों से 5800 रुपये की मामूली राशि फीस के तौर पर ली जा रही थी. अन्य संस्थानों में जहां स्टील के छर्रों पर ट्रेनिंग दी जाती है, वहीं नवलगढ़ में पहले दिन से कच्चा डायमंड प्रशिक्षणार्थियों को थमा दिया जाता था. सूरत, जयपुर, अहमदाबाद, भावनगर, जोधपुर और नवसारी जैसे स्थानों पर यहां से प्रशिक्षित युवाओं को रोज़गार मिल गया. डायमंड इंडस्ट्री में नियुक्ति के लिए पर्याप्त गारंटी की मांग की जाती है. यहां भी मोरारका फाउंडेशन ने प्रत्येक रत्नशिल्पी के बॉण्ड पेपर पर लिखित गारंटी देकर रोज़गार दिलाया.

सरकारी क्षेत्रों ने भी इस ओर ध्यान देकर संस्थान से अपने ख़र्चे पर प्रशिक्षण दिलाना शुरू कर दिया, जिनमें विभिन्न ज़िला ग्रामीण अभिकरण, ग्रामीण विकास मंत्रालय (भारत सरकार), अनुसूचित जाति विकास निगम, राजस्थान सरकार, ग्रामीण ग़ैर कृषि विकास अभिकरण (रूडा) और राजस्थान उद्योग विभाग आदि शामिल थे. इसके अलावा अन्य कई विकासोन्मुख स्वयंसेवी संस्थाओं ने भी देश के कोने-कोने से प्रशिक्षणार्थियों को भेजना शुरू कर दिया. दिसंबर 1995 से मार्च 1996 तक 18 प्रांतों के क़रीब 66 छात्र नवलगढ़ में प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे थे. कैंपस प्लेसमेंट भी यहां होने लगा था. शेखावटी के सैकड़ों युवा इस व्यवसाय से जुड़ने लगे थे. लेकिन, मोरारका फाउंडेशन की योजना प्रशिक्षण संस्थान स्थापित करने की नहीं, डायमंड ट्रेनिंग सेंटर के माध्यम से योजना स्थानीय युवाओं को प्रशिक्षित करके नवलगढ़ में डायमंड कटिंग एंड पॉलिशिंग इंडस्ट्री खड़ा करने की थी.

संस्था के प्रतिनिधियों का मानना था कि प्रशिक्षण संस्थान से ढाबे, होटल और पान-बीड़ी की दुकानें पनप सकती हैं, लेकिन इंडस्ट्री स्थापित नहीं हो सकती. इसी बात को ध्यान में रखकर संस्थान को बंद कर दिया गया. क़रीब साढ़े आठ सौ छात्र इस संस्थान से प्रशिक्षण प्राप्त कर विभिन्न स्थानों पर काम करना शुरू कर चुके थे. नवलगढ़ में डायमंड प्रोसेसिंग इकाइयों की स्थापना में भी फाउंडेशन ने सहयोग दिया और पहले से प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके लोगों ने भी अन्य लोगों को काम सिखाकर इस व्यवसाय को बढ़ावा देने का काम किया. जिन छह लोगों को सहयोग करके नौ मशीनों के साथ प्रोसेसिंग इकाइयों की स्थापना कराई गई थी, उनमें से चार ने कुछ समय बाद लागत ख़र्च संस्था को लौटा दिया. आज नवलगढ़ और आसपास के कई गांवों में दर्ज़नों डायमंड प्रोसेसिंग इकाइयां काम कर रही हैं. इससे क़रीब 15 सौ लोगों को रोज़गार मिला हुआ है, जिसमें से कुछ लोग आसपास के गांवों में कार्यरत हैं तो कुछ बड़े शहरों में काम कर रहे हैं. कुछ लोग कच्चा माल जयपुर के बड़े व्यवसायियों से लेकर आते हैं और कटिंग-पॉलिशिंग के बाद वापस कर देते हैं. कुछ इकाइयां ऐसी भी हैं, जो कच्चा माल ख़ुद ख़रीद कर लाती हैं और माल तैयार करके स्वयं बेचती हैं. सुखद एवं आश्चर्यजनक सत्य यह है कि इन सब में प्रोसेस होने वाले हीरों की मात्रा एवं इकाइयों की संख्या रत्ननगरी जयपुर से भी अधिक है.

मदन पुरी कहते हैं कि कौशल आधारित लघु एवं ग्रामीण उद्योग कभी भारतीय ग्राम्य अर्थव्यवस्था की रीढ़ माने जाते थे और गांव स्वयं आत्मनिर्भर आर्थिक सत्ता हुआ करते थे, जिसे कंपनी कल्चर ने धराशायी कर दिया. लेकिन, शेखावटी के लोगों ने साबित कर दिया है कि आसमां में भी सुराख़ करना संभव है, ज़रूरत तो बस तबियत से पत्थर उछालने की होती है.

feedback@chauthiduniya.com

आज जब पूरी दुनिया में आर्थिक संकट व्याप्त है तो ऐसे में इन देशों की सारी उम्मीदें भारत पर ही टिकी हैं. ऐसे में हमें अपने राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखते हुए खुली अर्थव्यवस्था की निगरानी करनी चाहिए.

किसी ने सही ही कहा है, कुछ लोगों को आप हमेशा बेवकूफ़ बना सकते हैं, सभी लोगों को कुछ समय के लिए, लेकिन आप सभी को हमेशा बेवकूफ़ नहीं बना सकते हैं.

विचारों के प्रति उदासीनता ठीक नहीं

एम जे अकबर

राहुल गांधी विचारधाराओं की लड़ाई के बाद के राजनीतिज्ञ हैं. यदि कुछ लोग सोचते हैं कि वह समूह विशेष को उपदेश पिला रहे हैं तो इसका सीधा मतलब है कि वह कुछ चूक कर रहे हैं. मतदाताओं का एक बड़ा तबका मज़हबी मुद्दों से अब ऊब चुका है. राहुल गांधी अपनी यात्राओं के पीछे एक सुखद अहसास छोड़ जाते हैं. ज़रा इन्हीं बातों की तुलना उनके चचेरे भाई वरुण से कीजिए, उनका यह मानना है कि बी-ग्रेड अभिनय, स्टार बनने का एक मुफ़ीद रास्ता है.

लेकिन विचारों के प्रति उदासीनता आपको विचारकों के प्रति उदासीन बना सकती है. मसलन, पाकिस्तान महज़ जमीन का एक टुकड़ा भर है. साथ ही यह एक सशक्त अवधारणा है कि 1947 में मुसलमान, हिंदुओं से और 1971 में मुसलमानों से अलग हुए. और, अब वे एक ख़तरनाक गृहयुद्ध को भड़का रहे हैं, जो संक्रामक साबित हो सकता है. पाकिस्तानी संघर्ष का मूल सिद्धांत राज्य की अवधारणा रही है. हर पाकिस्तानी इस बात से सहमत है कि उसका देश एक इस्लामिक देश होना चाहिए, लेकिन इसका मतलब क्या है, इसे कोई नहीं समझता है. आज हालात ऐसे हैं कि सारी चर्चाएं हवाई हमलों, सड़कों पर बम विस्फोटों, टैंक, मशीन गन्स और आत्मघाती मिशन को लेकर की जा रही हैं.

स्वाभाविक तौर पर इस्लामाबाद के पास हकीमुल्लाह महसूद जैसी व्याख्याएं नहीं हैं, जिसने एक पाकिस्तानी चैनल को बताया कि हम एक इस्लामिक मुल्क चाहते हैं, यदि हम इसमें कामयाब हुए तो इसके बाद हम भारतीय सीमाओं पर जाएंगे और भारत के ख़िलाफ़ लड़ने में मदद करेंगे. उनके इस्लामिक राज्य के मानचित्र में कश्मीर घाटी भी शामिल है. सेना और तालिबान में इस मानचित्र पर पूरी सहमति है और जब इन दोनों को एक-दूसरे को ख़त्म करने के मिशन से फ़ुर्सत मिलती है तो कश्मीर पर क़ब्ज़ा करने की परियोजना पर ये एक-दूसरे की मदद भी करते हैं.

हालांकि यह अब किताबी बातें ही रह गई हैं, जिस ओर मौलाना आज़ाद जैसे विद्वानों ने इशारा भी किया है कि राष्ट्रवाद के लिए विश्वास कभी भी कोई मापदंड नहीं रहा. सीधी सी बात है कि अरब जनता 22 देशों में फैली है. इससे साबित होता है कि मज़हब को किसी राज्य की सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता है.

हम भारतीय भू-राजनीति के सत्ता केंद्रित विचारों से काफ़ी आकर्षित होते हैं कि आकार ही शक्ति का सूचक है. जबकि यह हमारे ऐतिहासिक अनुभव से कतई मेल नहीं खाता है. आख़िर जब ब्रिटेन ने दुनिया के कई देशों पर अपना क़ब्ज़ा किया तो वह कितना बड़ा था? महज़ चंद हज़ार ब्रिटिश नागरिक और सेना ने 300 मिलियन भारतीयों पर शासन किया. ऐसा करने के लिए उन्हें कोई डब्ल्यूडब्ल्यूएफ पहलवान होने की भी ज़रूरत नहीं पड़ी.

> **हम भारतीय भू-राजनीति के सत्ता केंद्रित विचारों से काफ़ी आकर्षित होते हैं कि आकार ही शक्ति का सूचक है. जबकि यह हमारे ऐतिहासिक अनुभव से कतई मेल नहीं खाता है. आख़िर जब ब्रिटेन ने दुनिया के कई देशों पर अपना क़ब्ज़ा किया तो वह कितना बड़ा था? महज़ चंद हज़ार ब्रिटिश नागरिक और सेना ने 300 मिलियन भारतीयों पर शासन किया. ऐसा करने के लिए उन्हें कोई डब्ल्यूडब्ल्यूएफ पहलवान होने की भी ज़रूरत नहीं पड़ी.**

आज भारतीय राज्य को बाह्य तौर पर धार्मिक राष्ट्रवाद से ख़तरा है, जो अब आंतरिक ख़तरे की भी शक्ल लेता जा रहा है. इसकी सबसे बड़ी वजह है, साधनहीन लोगों में असंतोष की भावना. और, जबसे आर्थिक विकास की मलाई ऊंचे तबके को मिल रही है, तबसे इसने हिंसा की शक्ल अख्तियार कर ली है. राइज़िंग इंडिया ने ट्रिकल-डाउन सिद्धांत (इसके तहत उद्योगपतियों को टैक्स चुकाने में इस आधार पर छूट दी जाती है कि अप्रत्यक्ष तौर पर इसका लाभ बड़ी आबादी तक पहुंचेगा) के आधार पर वादा किया कि विकास का लाभ सभी लोगों तक पहुंचेगा, लेकिन विकास का यह रिसाव बहुत ही कम हुआ.

दरअसल इसका लाभ उठाने वाली संस्कृति को व्यापक तौर पर परिभाषित किया गया है. आर्थिक सुधारों के 17 वर्षों बाद भी ग़रीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों की तादाद 28 से बढ़कर 38 फ़ीसदी पर पहुंच चुकी है. समाज में हाशिए पर रहने वाले और बेघर लोगों को शामिल करें तो भारत की आधी से भी अधिक आबादी भूखी और हताश सोती है.

कांग्रेस, बीजेपी और सीपीएम नक्सलियों के विरुद्ध निर्णायक लड़ाई के लिए निर्विरोध रूप से सर्वसम्मति पर पहुंच चुके हैं, क्योंकि ग़रीबी दूर करने के लिए उनके पास राहत की योजना और रणनीति के तौर पर हिंसा को अपनाने के अलावा कोई विकल्प नहीं है. इसके लिए उनके पास कुंठित 300 मिलियन खाते-पीते भारतीयों का समर्थन है. इसीलिए अक्टूबर के महाराष्ट्र और हरियाणा चुनावों में लोगों का गुस्सा सत्ता प्रतिष्ठानों के ख़िलाफ़ दिखा भी. वे या तो वोट की राजनीति से बाहर रहने या अतिवादी और कट्टरवादी संगठनों की तलाश कर रहे थे.

आज़ादी के बाद से ही कांग्रेस सत्ता पर क़ब्ज़ा जमाए हुए थी, लेकिन जब साठ के दशक में इसका बिखराव शुरू हुआ तो इसने शासन स्तर पर व्यापक दरारें पैदा कर दीं, जिससे सत्ता के शीर्ष स्तर पर गठबंधन की अव्यवस्था पैदा हो गई. फ़िलहाल हम सभी इसके विपरीत हालात देख रहे हैं कि जबसे विपक्षी पार्टियां ग़रीबों के लिए सकारात्मक माहौल बनाने में नाकाम रही हैं, तबसे हमें विपक्ष का बिखराव ही नज़र आता है. और, ज़मीनी स्तर पर अस्थिरता की यही वजह भी नज़र आती है. चाहे वह वृहद नक्सली चुनौती हो या राज ठाकरे जैसे क्षेत्रीय स्तर के उन्मादी लोगों का मसला.

संभवत: हथियारों से लैस और असंवेदनशील राज्य नक्सलियों से युद्ध जीत भी लेंगे, लेकिन ऐसा वे राष्ट्र को कमज़ोर करने की क़ीमत पर ही कर सकते हैं. कमज़ोरी, वैचारिक शत्रुओं के साथ-साथ अवसरवादियों के लिए एक अवसर है. क्या चीन नक्सलियों को अपनी मदद देकर अपना प्रभाव भारत के अंदर और इसके इर्द-गिर्द बढ़ा सकता है? चीनियों ने विनम्रतापूर्वक माओ को देवतुल्य बना दिया, जबकि माओवाद को ख़ारिज़ कर दिया. ठीक उसी तरह जैसे हम गांधी की तो पूजा करते हैं, लेकिन गांधीवाद को नकार चुके हैं. चीन विचारधारा की अपेक्षा अवसरवाद से अधिक प्रेरित होगा, लेकिन कोई भी फुटबॉल खिलाड़ी आपको बता सकता है कि एक बेहतर अवसरवादी गोल करता है.

इससे भी बढ़कर, क्रांति की अपेक्षा रबड़ की गुड़िया निर्यात करना कहीं अधिक आसान है. बहरहाल, चीन में भारत को अस्थिर करने की कोई अनिच्छा नहीं होगी तो क्या हमें बढ़ती असमानता के बोझ तले लड़खड़ा कर चलने की ज़रूरत है.

किसी राष्ट्र की मज़बूती के लिए उसकी भौगोलिक संरचना की अपेक्षा कई और लक्षण होते हैं. यदि शीर्ष पदों पर क़ाबिज़ नए महत्वाकांक्षी लोग यह नहीं समझते हैं तो वे न तो अपनी और न ही देश के हितों की सेवा कर पाएंगे.

feedback@chauthiduniya.com

जब तोप मुक़ाबिल हो

अप्रत्याशित नहीं हैं चुनाव परिणाम

संतोष भारतीय

चुनावों के नतीजे आपके सामने हैं और आप ज़रूर मुस्करा रहे होंगे, क्योंकि फ़ैसला तो आपका ही लिया हुआ है. लेकिन भारत के राजनैतिक दलों को क्या हो गया है, और उन्हें क्यों अपनी ग़लतियां समझ में नहीं आ रही हैं. एक-एक प्रदेश में नज़र डालते हैं और तथ्यों को देखने की कोशिश करते हैं.

सबसे पहले अरुणाचल को लेते हैं. उत्तर पूर्व के राज्य भारत के प्रमुख राजनैतिक दलों के लिए कभी कार्यक्षेत्र नहीं रहे. केवल कांग्रेस ही एक ऐसा दल रहा, जिसने अरुणाचल सहित सभी उत्तर पूर्व राज्यों में लगातार काम किया. राष्ट्रवादी कांग्रेस को यहां अगर कुछ सीटें आती भी हैं तो उसके पीछे पी ए संगमा हैं जो यहीं के रहने वाले बड़े क़द के नेता हैं. वह कई बार लोकसभा का चुनाव जीते हैं और एक बार लोकसभा अध्यक्ष भी रह चुके हैं. उनकी बेटी केंद्र में सबसे कम उम्र की सांसद और मंत्री हैं.

उत्तर पूर्व के राज्यों में होने वाले चुनावों का इस्तेमाल राजनैतिक दलों ने स्वयं को क्षेत्रीय स्तर से राष्ट्रीय स्तर का बनाने के लिए किया है, क्योंकि चुनाव आयोग कहता है कि अगर आप चार राज्यों में छह प्रतिशत वोट ले आते हैं तो आप राष्ट्रीय दल बन सकते हैं. उत्तर पूर्व के राज्यों में होने वाले चुनावों में क्षेत्रीय दलों के उम्मीदवार बड़ी संख्या में इसी आशा में खड़े किए जाते हैं कि उन्हें वहां की जनता का छह प्रतिशत वोट मिल जाए.

हरियाणा में पिछले तीस-पैंतीस वर्षों से सरकारें बदलती रही हैं, पर यह पहली बार हुआ कि एक ही पार्टी की सरकार दो बार बनी. चुनावों से पहले कांग्रेस के मुख्यमंत्री भूपेंद्र हुड्डा ने माहौल बना दिया था कि वह सत्तर के क़रीब सीटें लाएंगे. भाजपा ने चौटाला से चुनावी समझौता तोड़ दिया था और भजनलाल अपने बेटों समेत कोई माहौल ही नहीं बना पा रहे थे. बहुजन समाज पार्टी उछलकूद तो कर रही थी, पर उसकी साख दलितों में ही नहीं थी. उसने भी पहले भजनलाल से समझौता किया और फिर तोड़ दिया. सभी दस-पंद्रह सीटें जीतना चाहते थे, ताकि अस्थिर विधानसभा आए और वे सौदेबाज़ी कर सकें.

हरियाणा देश का पहला प्रदेश बना, जहां आयाराम-गयाराम की कहावत गढ़ी गई. यहीं के लोगों ने समझदारी भरा फ़ैसला लिया. उन्होंने कांग्रेस को केवल इतना समर्थन दिया कि वह सरकार बना सके और विपक्षी दलों को इतना कम समर्थन दिया कि वे सोचें कि जनता से कटने का मतलब क्या होता है.

> **हरियाणा देश का पहला प्रदेश बना, जहां आयाराम-गयाराम की कहावत गढ़ी गई. यहीं के लोगों ने समझदारी भरा फ़ैसला लिया. उन्होंने कांग्रेस को केवल इतना समर्थन दिया कि वह सरकार बना सके और विपक्षी दलों को इतना कम समर्थन दिया कि वे सोचें कि जनता से कटने का मतलब क्या होता है.**

चौटाला को इकत्तीस सीटें हरियाणा चुनावों में मिलीं, जिसका अंदाज़ा कोई नहीं लगा पाया था. इसके पीछे सिर्फ़ एक कारण रहा कि उन्होंने इन चुनावों में चौधरी देवीलाल का नाम और उनके रास्ते पर चलने का संकल्प दोहराया.

अगर वह पिछले पांच सालों में देवीलाल जी के रास्ते पर चले होते तो आज सरकार उनकी होती. देवीलाल हरियाणा की राजनीति में एक बड़ा नाम तो है ही, एक राजनैतिक शैली का प्रतीक भी है. इस शैली में आम आदमी, उसकी समस्या और उसके लिए संघर्ष प्रमुख बिंदु होते हैं.

हरियाणा में कांग्रेस को चौवालिस सीटें मिलीं ज़रूर, पर कांग्रेस को सोचना चाहिए कि उसे क्यों पचास सीटें नहीं मिलीं. अभी कुछ महीनों पहले हुए लोकसभा चुनावों में दस में से नौ सीटें उसे जनता ने दीं, तब क्यों विधानसभा चुनावों में समर्थन नहीं दिया. राज्य सरकार के काम का फ़ायदा उन्हें कम मिला जो वोट देते हैं. किसानों की ज़मीन के अधिग्रहण और बेरोज़गारी व महंगाई भी प्रमुख कारण रहे.

कुछ ऐसा ही हाल महाराष्ट्र का रहा. टिकट बंटने तक कांग्रेस और एनसीपी के नेता लड़ते रहे, एक दूसरे पर वार करते रहे. चुनाव के बाद मुख्यमंत्री पद को लेकर बयानबाजी करते रहे. कांग्रेस और एनसीपी को लगता था कि अगर दोनों को अलग-अलग सीटें ज़्यादा आईं तो वे राज ठाकरे के साथ सरकार बनाने की योजना पर अमल करेंगे. इशारों में दोनों दलों ने इसका संकेत भी दे दिया था.

शिवसेना ने भाजपा के साथ चुनाव लड़ा, पर वह राज ठाकरे की भाषा और तेवरों के कारण अपना आधार कम कर बैठी. बाल ठाकरे और उद्धव ठाकरे के पास महाराष्ट्र के विकास की कोई तस्वीर थी ही नहीं. उनके पास केवल मराठी मानुस शब्द था. वह मराठी मानुस जीवन कैसे जिए, उसकी तरक़्क़ी कैसे हो, इससे बाल ठाकरे को कुछ लेना देना ही नहीं था, इसीलिए मराठी मानुस ने उन्हें छोड़ दिया. भाजपा शिवसेना की राजनैतिक शैली के समर्थन में तो नहीं बोली, पर उसे साथ देने का पूरा घाटा मिला. उसके उत्तर भारतीय समर्थक वर्ग ने पूरी तरह कांग्रेस को वोट दिया. महाराष्ट्र में उत्तर भारतीय और मुस्लिम समाज के सौ प्रतिशत के आसपास के समर्थन ने कांग्रेस और एनसीपी को सरकार में बैठने का मौक़ा दे दिया.

लेकिन आने वाले साल कांग्रेस-एनसीपी के लिए परेशानी के साल हो सकते हैं, क्योंकि उन्होंने राज ठाकरे को जितना प्रश्रय दिया है, वह कुछ सालों पहले पंजाब में जरनैल सिंह भिंडरावाले की याद दिलाता है. राज ठाकरे का बीजारोपण महाराष्ट्र की राजनीति में इन्हीं दोनों दलों की शैलियों के कारण हुआ है, जिसकी खाद नफ़रत है. संदेह इसी बात का है कि सरकार में रहते हुए कांग्रेस और एनसीपी राज ठाकरे से राजनैतिक लड़ाई लड़ेंगी या नहीं.

महाराष्ट्र और हरियाणा में जनता ने कांग्रेस को केवल सरकार बनाने का बहुमत दिया और संकेत दिया कि वह यदि अपने चुनावी वायदों पर अमल नहीं करेगी तो भविष्य में ख़तरा पैदा हो सकता है. वहीं भाजपा को उसने जमकर तमाचे मारे हैं और कहा है कि विपक्ष का धर्म न निभाने की यह सज़ा है. आडवाणी और राजनाथ सिंह के नेतृत्व की असफलता का यह स्पष्ट संकेत है. भाजपा को अभी ऐसे दिन और देखने हैं. महाराष्ट्र और हरियाणा ने मीडिया का दिमाग़ी दिवालियापन एक बार फिर खोल दिया. सरकारी विज्ञापनों और पार्टी के पैसे की ताक़त ने मीडिया की रिपोर्ट करने की क्षमता को प्रभावित किया, जिसका परिणाम निकला कि अधिकांश टीवी चैनलों और अख़बारों के अंदाज़े ग़लत निकले. पहले अगर ग़लती होती थी तो क्षमा मांग ली जाती थी, पर आज ग़लती साबित होने के बाद भी बेशर्मी दिखाना चलन बन गया है.

जिस तरह राजनीति में अपराधी घुस गए हैं, वैसे ही मीडिया में भी अपराधी और अंडरवर्ल्ड घुस गया है. जितनी आवश्यकता राजनीति से अपराधी तत्वों को समाप्त करने की है, उतनी ही ज़रूरत मीडिया से अक्षम, नाकारा और अपराधी मनोवृत्ति के लोगों से छुटकारा पाने की है. आज तो इसके लिए कोशिश की जा सकती है, हो सकता है कि कल इसके लिए देर हो जाए.

संपादक
editor.chauthiduniya.com

वैश्वीकरण : अभिशाप या वरदान

रवि किशोर

आज वैश्वीकरण और इसकी अवधारणा से हमारे जीवन का हर पहलू प्रभावित है. व्यापक तौर पर जब हम वैश्वीकरण की बात करते हैं तो इसका अभिप्राय आर्थिक संदर्भ में ही लेते हैं, मतलब अर्थव्यवस्था का वैश्वीकरण. जबकि आज इसका तात्पर्य आर्थिक वैश्वीकरण से कहीं ज़्यादा व्यापक है. यह हमारे जीवन के सभी पहलुओं संस्कृति, शिक्षा, राजनीति और कानून, सभी को अपने अंदर समाहित किए हुए है. निरंतर हो रही नई-नई खोजों, संचार संसाधनों, परिवहन और सूचना प्रौद्योगिकी विकास आदि वैश्विक एकीकरण के लिहाज़ से काफ़ी अहम साबित हो रहे हैं. इन विकास का ही नतीजा है कि आज पूरी दुनिया में लोग एक-दूसरे पर अधिक निर्भर हो गए हैं. हालांकि देशों के बीच भौतिक सीमाएं अभी भी मौजूद हैं, इसके बावजूद उन देशों के नागरिकों के बीच परस्पर निर्भरता में कई गुना वृद्धि हुई है. अब हालात ऐसे हो गए हैं कि किसी भी देश का बग़ैर आपसी सहयोग के अपना अस्तित्व बचाए रखना मुश्किल है. हालांकि इन मामलों में उत्तर कोरिया और कुछ हद तक ईरान को अपवाद माना जा सकता है. आज के संदर्भ में, हम संस्कृति के वैश्वीकरण की चर्चा करते हैं, लेकिन मैं यहां वैश्वीकरण की संस्कृति की बात करुंगा.

इसमें कोई शक़ नहीं कि वैश्वीकरण ने एक नया बाज़ार और धन-दौलत को पैदा किया है, लेकिन काफ़ी हद तक पूरी दुनिया में पीड़ा, अशांति और अव्यवस्था फैलाने के लिए भी ज़िम्मेदार है. यह विकास और ह्रास दोनों संदर्भों में एक उत्प्रेरक के तौर पर काम करता रहा है. मौजूदा आर्थिक संकट ने एक ओर हमारे सामने अस्थिर, अविनियमित, वैश्विक अर्थव्यवस्था के ख़तरों को सामनें लाकर खड़ा कर दिया है, वहीं दूसरी ओर समूची वैश्विक वित्तीय प्रणाली में बदलाव का एक सुनहरा अवसर भी दिया है. इसमें कोई संदेह नहीं है कि वैश्वीकरण एक प्राकृतिक शक्ति है. यह एक ऐसी अटल, अनिवार्य और अपरिवर्तनीय प्रक्रिया है, जिसे मानवीय सीमाओं में बांधना नामुमकिन है.

पिछले अनुभव बताते हैं कि विभिन्न संस्कृति, समाज और देश के लोग (विकसित, विकासशील और अविकसित) आपसी सहयोग, एकता और सम्मान के ज़रिए एक बेहतर और सुरक्षित दुनिया बना सकते हैं. इसी तरह, आज पूरा समाज जब आतंकवाद और अलगाववाद की समस्याओं से जूझ रहा है तो समाज का यही वर्ग नफ़रत और असुरक्षा का माहौल पैदा करते हैं. आज आतंकवाद भी एक वैश्विक समस्या की शक्ल अख्तियार कर चुका है.

वैश्विक अर्थव्यवस्था आज काफ़ी महत्वपूर्ण बन चुकी है. आज उपभोक्तावाद और बाज़ारवाद के इस युग में अर्थशास्त्र हमारे जीवन और कई दूसरे मुद्दों में काफ़ी अहम भूमिका निभा रहा है. आज किसी भी देश वित्तीय शक्ति उसकी विदेशी नीतियों का मार्ग दर्शक बन चुका है. तभी तो संयुक्त राष्ट्र महासभा की बैठक की अपेक्षा के जी-20 की बैठकें मीडिया के आकर्षण का केंद्र बनी हुई हैं. सामान्यत: आर्थिक वैश्वीकरण में क्रय-विक्रय, तकनीकों का लेन-देन, वैश्विक निवेश, घरेलू और अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों के लिए उत्पादन योजनाएं, सेवा और वितरण की सुविधा, कर्मचारी और प्रबंधन कार्यप्रणाली पर विशेष ध्यान दिया जाता है. नई तकनीकों का विकास, बाज़ार के बढ़ते दायरे, वैश्विक पूंजी की उपलब्धता में बढ़ोतरी, सूचना प्रौद्योगिकी में विकास, बाज़ार की प्रतिस्पर्धा, नए उत्पादों में उपभोक्ताओं की रूचि और बदलती जीवन शैली जैसी कई वजहें हैं, जो वैश्वीकरण की प्रक्रिया को अर्थ प्रधान बनाते हैं. वैश्वीकरण की आधुनिक प्रक्रिया ने विश्व के लगभग सभी देशों को प्रभावित किया है. यह न तो किसी ख़ास क्षेत्र या देश तक सीमित है और न ही यह राजनैतिक व सैन्य शक्ति पर आधारित है, इसका आधार मूल रूप से प्रतिस्पर्धा और उत्पादकता पर टिका है. यह एक सतत प्रक्रिया है जो बाज़ार और उत्पादों से अर्थव्यवस्थाओं के वैश्वीकरण के साथ शुरू होते हुए एक व्यापक स्तर तक पहुंची है.

हाल की, आर्थिक मंदी ने वैश्वीकरण के समर्थकों और विरोधियों के लिए बहस का एक अहम मुद्दा दे दिया. एक तरफ कुछ लोग इसे दुनिया की तमाम समस्याओं और समृद्धि का अचूक इलाज मानते हैं तो दूसरी ओर इसके विरोधी इसे समस्याओं की जड़ मानते हैं. अनियंत्रित वैश्वीकरण की वजह से, शायद ही किसी वैश्विक आर्थिक शिखर सम्मेलन के ख़िलाफ़ प्रदर्शन न हुआ हो. हालांकि, विरोध या समर्थन दोनों ही विचार ग़लत हैं. यह एक उभरती हुई शक्ति है, जिसका एक अपना ही दृष्टिकोण है और हमें उसे उसी ही रूप में स्वीकार करनी चाहिए. एक स्वतंत्र राष्ट्र और उभरती हुई आर्थिक शक्ति होने के नाते हमें वैश्वीकरण को समग्र और आशावादी नज़रिए से देखने की ज़रूरत है. हमें इसे एक अवसर के रूप में देखना चाहिए, जिसका इस्तेमाल देश की तरक्की के लिए किया जाना चाहिए.

साथ ही, हमें संतुलित आर्थिक नीतियों को अधिक तरजीह देने की ज़रूरत है ताकि हम मुश्किल हालातों में वैश्विक परिदृश्य का पूरा लाभ ले उठा सकें और मंदी जैसी पूंजीवादी विचारधारा से हाने वाले जोख़िमों सें देश को बचा सकें. हाल में, पूरी दुनिया जिस तरह आर्थिक मंदी की चपेट में घिरी है, उसका उदाहरण हमारे सामने ही है. जिस तरह से अमेरिका और यूरोप की बड़ी वित्तीय संस्थाओं का दिवाला निकला है, इससे हमारे विश्वास को मज़बूती ही मिली है कि किस तरह खुले,

अनियमित और अनियंत्रित वित्तीय पूंजीवादी मॉडल देश को आर्थिक अराजकता की ओर ले जाते हैं, क्योंकि इससे ज़ाहिर होता है कि चाहे-अनचाहे वैश्विक वित्तीय बाज़ार, अमेरिका और यूरोप के द्वारा न सिर्फ़ निर्देशित किया जा रहा था बल्कि एक तरह से इन पर इन देशों ने आधिपत्य बना रखा था.

मतलब अधिकांश अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाज़ारों पर अमेरिकी डॉलरों ने ही अपना प्रभुत्व क़ायम किया हुआ है. आज जब पूरी दुनिया में आर्थिक संकट व्याप्त है तो ऐसे में इन देशों की सारी उम्मीदें भारत पर ही टिकी हुई हैं. इस आर्थिक मंदी में भारत के लिए जो सबसे अहम बात है वह यह कि क़िस्मत हमारे साथ है. हमारी नीतियां हमारे लोगों की ज़रूरतों के मुताबिक़ तय होनी चाहिए बनिस्बत किसी वैश्विक विचारधारा या आर्थिक नीतियों के हिसाब से.

राजनीति, संस्कृति और क़ानूनों के वैश्वीकरण के मामलों में भी ठीक ऐसा ही है. हमारे देश में राजनीति परंपरागत रूप से राष्ट्रीय दायरों में होती रही है और राष्ट्रीय राजनीतिक व्यवस्था, संप्रभु राष्ट्रीय सरकारें ही देश में एकता, अखंडता और अपने नागरिकों के कल्याण की देखभाल के लिए ज़िम्मेदार रही होती हैं. पूरी दुनिया में सभी स्तरों पर जितने भी बदलाव हो रहे हैं, चाहे वह आर्थिक हो या दूसरी, इन सभी ने राजनीति को वैश्विक मंच पर ला दिया है.

राष्ट्रीय नीतियां देश के बाहर से निर्देशित हो रही हैं, यहां तक कि कई बार राजनीतिक दल ऐसी नीतियां बनाते हैं जो बाह्य राष्ट्र की नीतियों से प्रभावित होती हैं. आज भी सारे कम्यूनिस्ट चीन की ओर टकटकी लगाए रहते हैं और ये किसी भी अमेरिकी नीतियों या उनसे जुड़े मसलों का विरोध करने का कोई भी अवसर नहीं छोड़ते. राष्ट्रीय राजनीति यदि वैश्विक राजनीति से निर्देशित नहीं हो रही है तो कम से कम इन पर उनका असर तो ज़रूर है. प्राय: कई मुद्दों का समर्थन या विरोध उनकी योग्यता के आधार पर न होकर वैश्विक राजनीति की दशा-दिशा से प्रेरित होती हैं.

परमाणु मसले पर साम्यवादी पार्टियों के विरोध की सिर्फ़ यही वजह थी कि यह मसला अमेरिकी नीतियों से प्रभावित है और इससे भारत और अमेरिकी संबधों में घनिष्ठता बढ़ेगी. परमाणु नीति के कुछ पहलू आपत्तिजनक हो सकते हैं, लेकिन पूरी नीति ही ग़लत हो यह मुमकिन नहीं है. हमारे देश को ऊर्जा की ज़रूरत है और हमें यह समझना चाहिए कि देश को ऊर्जा क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने के लिए परमाणु ऊर्जा की बेहद ही आवश्यकता है.

वैश्वीकरण के सांस्कृतिक, तकनीकी और विकासात्मक पहलू की बात करें तो इन सभी ने एक व्यापक वैश्विक संस्कृति को जन्म दिया है. पहले की अपेक्षा कई गुना विकसित तकनीक और मीडिया (प्रिंट व इलेक्ट्रॉनिक) ने सभी सांस्कृतिक बंधनों को तोड़ दिया है. मनोरंजन कंपनियों अपनी सोच एवं अवधारणाओं को आम लोगों (चाहे वे कहीं भी रहते हों) के मुताबिक़ ढाल रही हैं. दुर्भाग्य से मीडिया जिस तरह पश्चिमी सांस्कृतिक मूल्यों में हम पर थोप ही है, किसी भी लिहाज़ से वह हमारे लिए फिट नहीं बैठता. कुछ टीवी प्रोग्राम मसलन समलैंगिता जैसे विषयों ने हमारे समाज और मान्यताओं पर हमला किया है और इनको लेकर सवाल उठाए जा रहे हैं कि यदि यह जारी रहा तो हमारा समाज पूरी तरह बर्बाद हो सकता है. संस्कृति का वैश्वीकरण ख़तरा नहीं है, यदि ख़तरा है तो वह है उच्छृंखल संस्कृति का वैश्वीकरण जो हमारे जीवन के सभी क्षेत्रों में अपनी जगह बनाती जा रही है. साथ ही, ये भारतीय संस्कृति और मूल्यों को भी नष्ट कर रही हैं. जो बातें आर्थिक वैश्वीकरण के संदर्भ में सही हैं वह वैश्वीकरण के सभी स्वरूपों पर भी लागू होता है, जहां हमें अपनी व्यवस्था, संस्कृति और मूल्यों को सुरक्षित रखने की ज़रूरत है.

(लेखक सुप्रीम कोर्ट के वकील हैं)

feedback@chauthiduniya.com

सपना आईटी हब का

19 अक्टूबर के अंक में प्रकाशित रिपोर्ट नोएडा: बिखर गया आईटी हब बनने का सपना उस सच्चाई पर रोशनी डालती है, जहां आमजन की पहुंच सहज रूप से नहीं हो सकती. दुख इस बात का है कि हमारे यहां योजनाएं बनती हैं, पैसा भी खर्च किया जाता है लेकिन भ्रष्ट अफसरशाही के चलते वे कामयाब नहीं हो पाती हैं.

सतीश गौतम, गाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश.

सुखद संकेत

भूमिहीन गरीबों का सत्याग्रह शीर्षक से प्रकाशित आलेख पढ़ा. दाद देनी चाहिए उन लोगों को, जो दिल और दिमाग से जड़ हो चुके हमारे अगुवाकारों को झकझोरने का हौसला बांधे हुए हैं. हम तो ईश्वर से यही प्रार्थना करते हैं कि ऐसे सत्याग्रही हमारे बेसुध शासकों को जगाने के अपने मकसद में कामयाब हों, ताकि उनकी समस्याएं सुलझें और दूसरे लोगों को भी एक रास्ता मिल सके.

मोहन सिंह, इंदौर, मध्य प्रदेश.

डॉक्टर निर्दोष तो हैं लेकिन...

यह सच है कि डॉक्टरों से भूल-चूक की घटनाएं अक्सर प्रकाश में आती रहती हैं, लेकिन हर बार इसके लिए डॉक्टरों को ही अपराधी मान लेना कहीं से न्यायसंगत नहीं है. फिर भी ऑपरेशन के दौरान कैंची और तौलिया जैसी बड़ी वस्तुएं मरीज के पेट में छोड़ देना भूल नहीं, बल्कि सरासर लापरवाही है. जब दिक्कत घटने के बजाय बढ़ जाए तो इलाज का औचित्य आखिर क्या है?

सतवीर आहूजा, नई दिल्ली.

अमूल्य धरोहर

बेतिया के महाफ़िजखाने पर आधारित रिपोर्ट पढ़ने को मिली. अच्छी लगी, बधाई. कहना यह है कि वहां रखे अमूल्य दस्तावेजों को बहुत सावधानी के साथ सहेजने की जरूरत है. ऐतिहासिक महत्व की उपरोक्त धरोहरों के प्रति समाज, प्रशासन और शासन का कर्तव्य बनता है कि वह उन्हें पूरी सुरक्षा दे, ताकि आने वाली पीढ़ी अपने बीते हुए कल के बारे में जान सके.

जियालाल यादव, हजारीबाग, बिहार.

बिहार और बिजली

19-25 अक्टूबर के अंक में प्रकाशित जगमग बिहार का सपना अंधेरे में एक सटीक रिपोर्ट है. यही सच है कि सिर्फ राजधानी पटना को छोड़कर कहीं भी बिजली के दर्शन सहज रूप से नहीं होते हैं. न जाने कब वह दिन आएगा, जब पूरे राज्य को जरूरत भर बिजली मिल सकेगी.

अजीत सिन्हा, मोतिहारी, बिहार.

पाठक अपने विचार और सुझाव हमें इस पते पर भेज सकते हैं-
संपादक, चौथी दुनिया, एफ-2, सेक्टर - 11
नोएडा (उत्तर प्रदेश) पिन-201301
ई-मेल पता : feedback@chauthiduniya.com

सांप्रदायिक ताक़तों को चुनौती

सौमित्र मोहन

हमारा समाज आज भी पिछड़ा हुआ है. साथ ही उतना शिक्षित नहीं है, जिससे वह नेताओं की उस चाल को समझ सके, जिससे संप्रदायवाद को बढ़ावा मिलता है. आज हर कोई यह महसूस करता है कि धीरे-धीरे, लेकिन लगातार भारत ख़ुद को एक राज्य के रूप में मज़बूत कर रहा है. भारत में पांच दशक से भी अधिक समय तक की लोकतांत्रिक व्यवस्था ने जीवंत सभ्य समाज को जन्म दिया, जो आज के सूचना और संप्रेषण के दौर में नुमाइशों से प्रेरित है. आज उम्मीदों का उफान अलग-अलग रंग ले रहा है और ख़ुद को उस रूप में पेश कर रहा है, जिसे सभ्य समाज के लिए एक सकारात्मक क़दम माना जा सकता है. इस सभ्य समाज को लोकहित से जुड़े क़ानूनी मामलों, ग़ैर सरकारी संगठनों की सक्रियता और जागरूक जन नेतृत्व से काफी मदद भी मिलती है. इन नेतृत्व करने वाले लोगों में राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, अन्ना हजारे, मेधा पाटेकर, टी एन शेषन, अलफॉन्ज़ों और जी आर खैरनार जैसी शख्सियतें शामिल हैं.

एक पहलू यह भी है कि आज हर कोई यह बड़ी शिद्दत से महसूस करता है कि पंचायती राज संस्था में सत्ता के विकेंद्रीकरण पर ज़ोर दिया जाना चाहिए, ताकि ज़मीनी स्तर पर सत्ता का विभाजन हो सके और इसके तहत व्यवस्था में हाशिए पर रह गए लोगों का विकास सुनिश्चित हो पाए. यदि एक बार ऐसा होता है तो भारतीय राजनीतिक व्यवस्था को कुटिल राजनेताओं के चंगुल से बाहर निकलने में अधिक वक़्त नहीं लगेगा. आख़िरकार, किसी ने सही ही कहा है, कुछ लोगों को आप हमेशा बेवकूफ़ बना सकते हैं, सभी लोगों को कुछ समय के लिए, लेकिन आप सभी को हमेशा बेवकूफ़ नहीं बना सकते हैं. दरअसल, मुद्दा यह है कि समाज स्वार्थी लोगों से भरा हुआ है और अपने स्वार्थों एवं सत्ता की छीनाझपटी के लिए कोई भी पीछे नहीं रहना चाहता है.

लेकिन जो बातें ऊपर की गईं, उसके बारे में हताश होने की कोई ज़रूरत नहीं है. एक विशाल और व्यापक विविधताओं से भरा यह देश राज्य-राष्ट्र से राष्ट्र-राज्य तक की दूरी तय करने में कई समस्याओं का सामना कर चुका है. कई मायनों में भारत काफ़ी भाग्यशाली रहा है, जिसे कई मर्तबा सही दिशा में ले जाने के लिए उपयुक्त नेतृत्व भी मिला. इन नेतृत्वों की व्यापक मौजूदगी ने कई मुद्दों को हल करने में काफ़ी सहायता पहुंचाई. इसलिए हमें सांप्रदायिकता के बढ़ते लक्षणों के बावजूद सिर्फ़ राष्ट्रीय एकता को ही मज़बूत करने की ज़रूरत है और इसके कई संकेत भी मिल रहे हैं. यह सबसे अहम तथ्य है कि आज सभी भारतीय, क्रिकेट का ख़ूब आनंद उठाते हैं. भारतीय टीम की लोकप्रियता इस तथ्य को साबित करती है. साथ ही बेनेडिक्ट एंडरसन अपनी मशहूर रचना इमैज़िन्ड कम्युनिटी में ऐसे समाज के विकसित होने की चर्चा भी करते हैं. पोखरन-2 के समय में भी संपूर्ण भारत में उसी तरह का आनंद और उत्साह देखा गया. आगे करगिल ने इसे पुष्ट भी किया. और, यदि कोई शक़-शुबहा रहा भी तो गुजरात भूकंप के बाद पूरे भारत से सकारात्मक सहयोग ने हमें ख़ुश होने का एक और मौक़ा दिया. साथ ही इसने सांप्रदायिक नरसंहार के दर्द को भूलने में भी काफ़ी मदद की.

अक्सर ऐसा प्रतीत होता है कि राजनीतिक बादलों के दरम्यान हमें कोई उम्मीद नज़र नहीं आती है. हमारी राजनीति का एक वर्ग कुछ मामलों में ग़ैर ज़िम्मेदार, लापरवाह और बेईमान हो सकता है, लेकिन जब बात राष्ट्रीय एकता और बेहतरी की आती है तो इसके साथ किसी तरह का समझौता नहीं किया जाता है. शायद ही कोई यह भूला होगा कि किस तरह आई के गुजराल की अगुवाई वाली राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने कुछ लोगों द्वारा रखी गई मांग को नहीं माना, नतीजतन उनकी सरकार गिर गई. यह मांग इसलिए की गई, क्योंकि जैन कमीशन, जो पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी की हत्या की जांच कर रहा था, ने उस पार्टी की भूमिका पर सवाल उठाए थे. साथ ही उस हत्या में राज्य विशेष के लोगों की भूमिका पर भी सवाल उठाए गए थे. यदि एक बार ऐसा हो जाता तो एक समुदाय विशेष को कलंकित करने का इतिहास भी दर्ज़ हो जाता और इस तरह राज्य में नफ़रत फैलाने के लिए यह आसान रास्ता मिल जाता. सरकार तो गिर गई, लेकिन उसने भारतीयों में अलगाव पैदा होने से रोक लिया. हालांकि यह सब है तो कुछ नहीं, लेकिन एक विकसित और परिपक्व हो रहे राष्ट्र के लिए भावनाओं की विविधता थी.

भारत में गलाकाट दलीय राजनीति के दौर में जो अनैतिक और बेईमान नेता हैं, वे वास्तविक मुद्दों की जगह वोट बैंक के लिए बेहद ही आसान संसाधनों पर टूट पड़े हैं. और, ऐसे में आशा और निराशा के बीच लोगों को मुंहतोड़ जवाब देना ही इस गुलामी से मुक्ति का एकमात्र ज़रिया नज़र आता है. बुनियादी स्तर पर संसाधनों के बंटवारे में समानता, लोगों में शिक्षा और बौद्धिक तौर पर समृद्धि आ जाए तो इस तरह की संकीर्ण राजनीति के लिए कोई जगह ही नहीं बचेगी. जाति, मज़हब और भाषा आदि, जो आज हमें बांटने का काम कर रहे हैं, वे लोगों को सिर्फ़ जोड़ने का काम करेंगे. साथ ही यही बात हमारी राजनीति का एक अंग बनेगी.

कुछ दक्षिणपंथी संगठनों की बढ़ती गतिविधियां कई मायनों में चिंता की वजह हैं, लेकिन मुद्दा यह है कि इस मामले में क्या किया जा सकता है? क्या कोई ऐसे संगठनों या इस तरह की राजनीति पर प्रतिबंध लगाने की भी सोच सकता है? निश्चित तौर पर नहीं, ख़ासकर भारत जैसे लोकतांत्रिक देशों में. प्रतिबंधित करने या उन पर आरोप लगाने का मतलब होगा कि इस तरह की समस्याओं को बढ़ावा देना. जैसा कि किसी ने दूसरे के बारे में सही ही कहा है, उसे अपने साथ रखो, फिर उससे मुक़ाबला करो, बजाय इसके कि उसे अलग-थलग करके उससे निपटा जाए. इसलिए हमारी कोशिश होनी चाहिए की उन्हें मुख्य धारा से जोड़ने की तरकीबें निकाली जाएं. ऐसे संगठनों के सदस्यों को यदि सकारात्मक रास्तों पर लाया जाए तो वे एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय संपत्ति साबित होंगे. साथ ही यदि उनके सदस्यों की रूपरेखा बदली जा सके तो यह भारतीय आबादी को एकजुट करने में काफ़ी अहम साबित होगा और हर लिहाज़ से बेहतर भी.

ऐसे संगठनों ने अपनी इन सभी ख़ामियों के बावजूद अपनी राजनीति और कार्यकलापों की दशा व दिशा में व्यापक बदलाव भी किए हैं. उन्होंने यह समझ लिया है कि इस तरह की राजनीति, जिसमें भारतीय समाज का एक बड़ा तबका उपेक्षित रह जाता है, के ज़रिए अधिक समय तक उनका अस्तित्व नहीं रह सकता है. जिस तरह से भारतीय समाज पिछले कुछ समय में एकजुट हुआ है, उससे कोई भी राजनीतिक पार्टी अपने बूते पर सरकार बनाने का दावा नहीं कर सकती. दक्षिणपंथी पार्टियों के लिए यह और भी बेहद मुश्किल है, जब तक कि वे अपनी विचारधारा और अतिवादी राजनीति शैली का त्याग नहीं करतीं. उनके लिए अपनी स्थाई जगह बनाना मुश्किल ही होगा. हालांकि इस तरह की कुछ पार्टियां धीरे-धीरे केंद्र में अपनी पैठ बनाती रही हैं और राष्ट्रीय परिदृश्य में मुख्य राजनीतिक दल के रूप में ख़ुद की पहचान भी बना चुकी हैं. इससे ज़ाहिर है कि किस तरह इस देश में पार्टी पद्धति फल-फूल रही है. सिर्फ़ एक दलीय व्यवस्था से कई समस्याएं पैदा होती हैं, जैसा कि हमारी आज़ादी के बाद आरंभिक वर्षों में एक दलीय पार्टी का दौर था. यह न सिर्फ़ पूरी विकास परियोजना के प्रति आत्मसंतुष्ट होता है, बल्कि इससे विकास के कामों में अपारदर्शिता भी आती है, जिससे पार्टी ग़ैर जवाबदेह हो सकती है. एक लिहाज़ से तानाशाह भी.

यहां कोई भी यह कह सकता है कि वोट बैंक के पोलराइज़्ड होने की वजह से स्थाई सरकार के युग का भी अंत हो चुका है, जिसे किसी भी लिहाज़ से सही नहीं माना जा सकता है. स्थिरता आवश्यक है, लेकिन देश के सामाजिक-आर्थिक-राजनीतिक विकास के लिए यह कोई अनिवार्य शर्त नहीं है. और ज़रा लोगों से पूछिए कि वे स्थाई अथवा ज़िम्मेदार सरकार चाहते हैं. हर किसी की चाहत होगी ज़िम्मेदार सरकार की. पूर्ण बहुमत की सरकार निरंकुश बन सकती है और साथ ही उसके ग़ैर जवाबदेह होने की भी आशंका बनी रहती है. जबकि गठबंधन की सरकार पर ज़िम्मेदारी और जवाबदेही के साथ काम करने का दबाव रहता है. और, सबसे ज़रूरी बात भी यही है. विविधताओं वाला समाज हमेशा ज़िम्मेदारी से काम करता है. साथ ही जब तक आधारभूत नीतियों और मूल्यों पर सर्वसम्मति बनी रहती है, अस्थिरता के बारे में हमें कभी नहीं सोचना चाहिए. 1989 से कई सरकारें केंद्र में आईं और गईं, लेकिन सभी की मूल नीति एक ही रही. भारतीय अर्थव्यवस्था के निजीकरण और उदारवादी नीतियों के बावजूद कोई भी इसे बदल नहीं पाया है.

भारत दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देशों में एक है. यह ख़ुद को वृहद वोट बैंक की राजनीति के ज़रिए मज़बूत और एकजुट कर रहा है तो ज़ाहिर है कि ऐसे में हर कोई इस लोकतांत्रिक महाकुंभ में शामिल होना चाहेगा. राजनीतिक और प्रशासकीय सहित हमें हर स्तर पर न केवल नेतृत्व की ज़रूरत है, बल्कि सामने आने वाले अवसरों को भुनाने की भी ज़रूरत है. इस मुल्क को एक सैनिक शासन की अपेक्षा एक समर्पित, प्रतिबद्ध और ज़िम्मेदार नेतृत्व के साथ-साथ समृद्ध विचारधारा की भी ज़रूरत है. एक नेतृत्व जो अपने लोगों की क़ीमत पर बढ़ता है, जो अपने लोगों की क्षमताओं को बढ़ाता है.

एक लोकतांत्रिक पद्धति बहुमत के सिद्धांत पर चलती है, लेकिन इसे इतना अधिक ग़ैर जवाबदेह नहीं होना चाहिए कि इससे देश के बड़े समूहों का हित नज़रअंदाज़ हो. वोट बैंक की राजनीति सकारात्मक होनी चाहिए और एक राष्ट्र के निर्माण में व्यापक तौर पर मदद करनी चाहिए. सबसे बड़ी बात कि यह हमारे राजनीतिक वर्ग को ज़िम्मेदार बनाने के लिए अहम साबित होगी. जितनी जल्द या देर सबेर लोग राजनीतिज्ञों के खेल को समझेंगे और इस तरह की राजनीति को नकारेंगे, उतना ही यह देश हित में होगा. आख़िरकार, एक राजनीतिक वर्ग की ओछी बुद्धिमत्ता पूरे देश पर राज नहीं कर सकती है.

साथ ही हमारे नेतृत्व को देश में संस्थाओं को पुनर्जीवित करने के लिए कुछ करना पड़ेगा और यह बुद्धिजीवी वर्ग, मीडिया, औद्योगिक वर्ग और सभ्य समाज के सहयोग से ही हो सकता है. यदि यह सब तत्काल किया जाता है तो हम सभी जल्द ही एक विकसित भारत में रह रहे होंगे. एक ऐसे भारत में, जिसमें मूल्य, आदर्श और संविधान में निहित सिद्धांत होंगे. हम सभी भारतीय ख़ुशी और समृद्धि पूर्वक रहेंगे. ज़ाहिर है, भारत अवसरवाद की राजनीति से फल फूल रही सांप्रदायिकता के दानव से भी अछूता रहेगा.

(लेखक प. बंगाल में आईएएस अधिकारी हैं. आलेख में व्यक्त विचार उनके अपने हैं और इनका सरकार के विचारों से कोई संबंध नहीं है.)

feedback@chauthiduniya.com

अबू निदाल अब इस दुनिया में नहीं है. उसकी मौत के साथ ही उसकी ज़िंदगी से जुड़े कई राज़ भी दफ़न हो गए. वह ब्लैक सेप्टेंबर का सरगना था या मोसाद का मोहरा?

ख़ुफ़िया एजेंसियों के सीक्रेट

मोसाद का मोहरा या गुनहगार!

इज़रायल का ख़ुफ़िया आतंक

ब्लैक सेप्टेंबर की नींव रखने वाला अबू निदाल और उसके कारनामे.

इज़रायल की ख़ुफ़िया एजेंसी मोसाद की कहानी रहस्यों से भरी है. जितना यह रहस्यमयी है, इसके जासूसों की ज़िंदगी और कारगुज़ारी भी उतनी ही रहस्यों भरी है. यह एक ऐसे शख्स कहानी है, जिसके बारे में अंत तक रहस्य बना ही रहा. यह राज़ उसके मौत के बाद भी बरक़रार रहा कि वह इज़रायल का दुश्मन है या दोस्त. मोसाद का एजेंट है या मोहरा. उसकी ज़िंदगी से जुड़े कई पहलू हैं जो लोगों में और भी भ्रम पैदा करते हैं. जी हां, हम बात कर रहे अबू निदाल की. जिसके बारे में कई दिलचस्प और लोगों को अंधेरे में रखने वाली कहानियां मशहूर हैं. पहली बात तो यह कि 1948 में अरब–इज़रायल युद्ध में उसका पूरा परिवार नेस्तेनाबूत हो गया था. उसके बाद अबू की ज़िंदगी एक शरणार्थी शिविर में गुज़री. वहीं दूसरी ओर यह भी चर्चा रही कि वह अरब मां और यहूदी पिता की संतान था. भले ही उसकी पहचान दो हो, लेकिन उसके कारनामे काली करतूतों की पूरी दास्तां बयां करते हैं, जिससे यह अंदाज़ा लगाना कतई मुश्किल नहीं होगा कि अबू निदाल आख़िर कौन था?

1972 के म्यूनिख ओलंपिक की कड़वी यादें अभी भी लोगों की जेहन में ताजा है. इसकी ख़ौफ़नाक दास्तां भला कोई भूल भी कैसे सकता है? इस आतंकी वारदात में इज़रायल ने अपने 11 खिलाड़ियों को खो जो दिया था. खेलों के इतिहास में अब तक का यह सबसे बर्बर आतंकी हमला था. उसके बाद 1976 में एयर फ्रांस के जेट विमान का अपहरण हुआ, जिसमें अप–हरणकर्ताओं ने यहूदी यात्रियों को छोड़कर सभी को आज़ाद कर दिया. उसके बाद इनका क़हर इन यहूदियों पर टूटा.

हवाई जहाज के अपहरण की एक और वारदात हुई एथेंस में. साल था 1985. अपहरणकर्ताओं ने जहाज को अपने क़ब्ज़े में तो कर लिया लेकिन वह इस बात से अनजान थे कि जहाज में ईंधन बहुत ही कम है. नतीजतन, उन्हें माल्टा एयरबेस पर ईंधन भरने के लिए विमान को उतारना पड़ा. लेकिन माल्टा एयरबेस के अधिकारियों ने ईंधन भरने से मना कर दिया. फिर क्या था, आतंकियों की बंदूकें अब इन अधिकारियों से बातें करने लगीं. उन्होंने यात्रियों को भी नहीं बख्शा. एथेंस की सरकार और आतंकियों के बीच के शह और मात का यह खेल 60 यात्रियों और दो आतंकियों की मौत के बाद ख़त्म हुआ. इस मिशन को ख़त्म होने में तक़रीबन 30 घंटे से भी अधिक का वक़्त लगा. 1985 में एकबार फिर ब्लैक सेप्टेंबर के आतंकियों ने मिस्र के एक समुद्री जहाज का अपहरण कर लिया. और इन तमाम वारदातों के पीछे जिस एक शख्स का दिमाग़ काम कर रहा था, वह शख्स कोई और नहीं ब्लैक सेप्टेंबर का सरगना और इसकी बुनियाद रखने वाला अबू निदाल ही था. इन सभी वारदातों में जो एक और समानता थी वह यह कि इन सभी आतंकियों को महफूज़ छोड़ दिया गया. सवाल उठता है, मोसाद ने इन आतंकियों के ख़िलाफ़ कुछ किया क्यों नहीं? जबकि उसके भी कई नागरिक इन वारदातों में मारे गए थे. एक बार फिर जवाब मिलता है कि वे मोसाद के एजेंट थे.

सबसे दिलचस्प तो यह है कि म्यूनिख ओलंपिक के गुनहगारों को मोसाद ने जिस तरह उनके अंजाम तक पहुंचाया यानी ब्लैक सेप्टेंबर के आतंकियों को मौत की नींद सुलाया, उसी मोसाद ने अबू निदाल पर हाथ डालने की जुर्रत तक क्यों नहीं की? इशारा बिल्कुल साफ़ था, कहीं न कहीं अबू निदाल और मोसाद के तार जुड़े हुए थे.

अबू निदाल के मोसाद का मोहरा होने की जो सबसे बड़ी वजह नज़र आती है, वह है ख़ुद मोसाद की दहशत. मोसाद के दहशत से हर कोई वाक़िफ़ है. साथ ही इस बात से भी कि एक बार मोसाद जिस किसी को अपने निशाने पर ले लेता है, उसका एक ही अंजाम होता है. जी हां, उसका ख़ात्मा. मोसाद दुनिया से उसका नामोनिशान तक मिटा देता है. लेकिन अबू निदाल के मामले में ऐसा कुछ भी नहीं था.

अबू निदाल लगभग 30 वर्षों तक इस संगठन को चलाता रहा और इस दौरान उसने 900 से भी अधिक लोगों को मौत के घाट उतारे. मोसाद का एजेंट होने का शक़ उस पर इसलिए भी होता है कि यह कई फिलिस्तीनी नेताओं की हत्या की साज़िश में शामिल रहा है. साथ ही, अपहरण, बम–धमाके और हत्याओं के ज़रिए इसने अपना ख़ौफ़ क़ायम करने की कोई कोर–कसर नहीं छोड़ी. इसके जाल इराक, सीरिया, लीबिया और लेबनान तक फैले हुए थे. अबू निदाल की गतिविधियों की वजह से ही कई यूरोपीय देश उसे मोसाद का एजेंट मानते थे. ख़ुफ़िया एजेंसियों पर पैनी नज़र रखने वाले मशहूर लेखक पैट्रिक सील की मानें तो अबू निदाल बिना किसी शक़ोशुबहा के मोसाद का एजेंट था, क्योंकि उसने जितने भी कारनामों को अंजाम दिया, उसका सबसे ज़्यादा फ़ायदा यदि किसी को हुआ तो वह इज़रायल ही था. मध्य पूर्व एशिया में आतंकवादी संगठनों पर गहरी नज़र रखने वाले, यहां तक कि अबू निदाल के संगठन के ही कुछ सदस्य इस बात की तस्दीक करते हैं. उसने कई ऐसे फिलिस्तीनियों को मारा जो इज़रायल की आंखों की किरकिरी बने हुए थे. यह भी ध्यान देने वाली बात है कि उसने उन्हीं फिलिस्तीनियों को मौत के घाट उतारा जो इज़रायल के लिए सबसे ज़्यादा ख़तरा बने हुए थे.

यदि कहा जाए कि मोसाद अबू निदाल के ज़रिए अपने मंसूबों को अंजाम देता था तो कतई ग़लत नहीं होगा. बात 1986 की है. अबू निदाल के ब्लैक सेप्टेंबर ने जर्मनी के ला बेले डिस्को में बम प्लांट कर दिया. दरअसल, यह सारा कारनामा इज़रायली ख़ुफ़िया एजेंसी मोसाद का था. इस दौरान मोसाद ने दो यूएस अधिकारियों को मार डाला, लेकिन इसका शक़ गया लीबिया पर और उसे इसका ख़ामियाज़ा भी भुगतना पड़ा. अमेरिका ने लीबिया पर हमला बोल दिया.

इस तरह देखा जाए तो मोसाद इज़रायल के हितों की रक्षा के लिए तरह–तरह के मिशन और कारनामों को अंजाम देता रहा है. यहां तक कि कई दफ़ा तो उसने अपने ही नागरिकों की हत्या करवाई ताकि इसका इल्ज़ाम फिलिस्तीन और दूसरे अरब देशों पर लगे और इज़रायल को उन पर हमला बोलने का एक मौक़ा मिल सके. मोसाद की इसी मिशन का एक पहलू अबू निदाल था, जिसने अमेरिका पर 9/11 के हमले के छह महीने बाद हमेशा–हमेशा के लिए इस दुनिया को अलविदा बोल दिया. उसके साथ ही दफ़न हो गया एक राज़. राज़ उसके असली पहचान की. आख़िर कौन था– अबू निदाल. ब्लैक सेप्टेंबर का सरगना या मोसाद का मोहरा!

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

ज़रा हट के

हाथियों के लिए हॉस्पिटल

कुत्ते और बिल्ली के लिए खुले अस्पतालों के बारे में अधिकतर लोग जानते होंगे और कुछ तो वहां गए भी होंगे, लेकिन हाथियों के नर्सिंग होम के बारे में बहुत कम लोग जानते होंगे. अरे भाई, हाथियों के लिए भी नर्सिंग होम ज़रूरी है. अगर शरीर के हिसाब से भी देखा जाए तो कहां कुत्ता, बिल्ली और कहां हाथी! लेकिन ऐसा नर्सिंग होम भारत में नहीं, बल्कि थाईलैंड में खुला है. हालांकि थाईलैंड में यह पहला नर्सिंग होम नहीं है. इससे पहले भी वहां हाथियों की देखरेख के लिए दो नर्सिंग होम खुल चुके हैं. यह नया नर्सिंग होम लैमपांग प्रांत में खोला जा रहा है. रिपोर्ट के मुताबिक़, थाईलैंड में हाथियों की देखरेख पर विशेष ध्यान दिया जाता है.

राजधानी बैंकॉक से 490 किलोमीटर दूर इस नए नर्सिंग होम का उद्घाटन आगामी 21 नवंबर को होगा. 153 हैक्टेयर क्षेत्रफल में फैले इस नर्सिंग होम के बीचोंबीच दो छोटी नदियां हैं, जिसमें हाथी नहा सकेंगे. सबसे बड़ी बात यह कि इस नर्सिंग होम की देखरेख की ज़िम्मेदारी फॉरेस्ट इंडस्ट्री आर्गेनाइजेशन (एफआईओ) को सौंपी गई है, जो हाथियों के एक अन्य नर्सिंग होम की भी देखरेख करता है. इससे एक बात तो साफ़ ज़ाहिर है कि नर्सिंग होम में उनकी देखरेख तो होगी ही साथ ही वह वहां मौज मस्ती भी कर सकेंगे. हाथी विशालकाय जानवर है उसे संभालने या उसकी तबीयत ख़राब होने पर उसकी देखभाल के लिए कम से कम दस से पंद्रह लोगों की ज़रूरत पड़ती है. इसलिए अब दस से पंद्रह लोगों को नहीं बुलाना पड़ेगा. क्योंकि नर्सिंग होम में इतने लोग हमेशा मिल जाएंगे और उनका इलाज भी कुशल वेटनरी डाक्टरों द्वारा होगा.

कम दृष्टि वालों की उम्र कम!

अक्सर लोग आपको यह कहते मिल जाएंगे कि उम्र बढ़ने साथ–साथ आंखों की रोशनी भी कम होने लगती है. इसका मतलब साफ़ है कि आंखों की रोशनी का संबंध आपकी उम्र से जुड़ा है. लेकिन जो बात हम आपको बताने जा रहे हैं, उसे सुनकर आप चौंक जाएंगे. एक अंतरराष्ट्रीय टीम के अध्ययन से यह बात सामने आई है कि जिन बुज़ुर्गों की आंखों की रोशनी कम हो जाती है, उनकी उम्र भी कम होती है.

अध्ययन में बताया गया है कि इस तरह की समस्या 49 से लेकर 74 वर्ष के लोगों में होती है और यह जल्दी ठीक भी नहीं होती. इसके चलते उन्हें मौत का ख़तरा सबसे ज़्यादा बना रहता है. हालांकि अध्ययन में साफ़ कहा गया है कि इसकी चपेट में ज़्यादातर उम्रदराज़ लोग ही आते हैं.

अर्काइव ऑफ ऑप्थामलॉजी में प्रकाशित इस रिपोर्ट के मुताबिक़, आंखों की कमज़ोर पड़ती रोशनी का संबंध सीधे तौर पर मौत से है. कम रोशनी के कारण दुर्घटना, डिप्रेशन और गिरने की आशंका ज़्यादा रहती है. टीम के नेतृत्वकर्ता माइकल जे करपा ने बताया कि बेशक़ आंखों की क्षति का संबंध मौत से है, लेकिन यह भी साफ़ तौर पर नहीं कहा जा सकता है कि आंखों की कमज़ोर पड़ती रोशनी से मौत जल्दी हो जाएगी. उन्होंने कहा कि इंस्टीट्यूट के शोधकर्ता इस विषय पर शोध कर रहे हैं. शोधकर्ताओं ने दो साल के अंतराल में 49 वर्ष से अधिक उम्र के 3654 लोगों पर अध्ययन किया है, जिनकी रोशनी कम होती जा रही थी. इनमें महिलाओं को भी शामिल किया गया.

32 नए ग्रहों की खोज

हमारी आकाशगंगा में ऐसे असंख्य तारे हैं, जिनकी खोज में वैज्ञानिक और खगोलशास्त्री जुटे रहते हैं और उनके बारे में छोटी सी छोटी जानकारी हम तक पहुंचती रहती है. इस बार भी खगोलशास्त्रियों ने कुछ ऐसा ही कर दिखाया है. उन्होंने सौर मंडल के बाहर 32 नए ग्रह खोजने का दावा किया है.

उनका कहना है कि इसमें पृथ्वी के आकार से पांच गुना बड़े और बृहस्पति के आकार से पांच से लेकर दस गुना बड़े ग्रह शामिल हैं. इन ग्रहों की खोज दक्षिणी अमेरिकी देश चिली स्थित वेधशाला की दूरबीन में लगे उपकरण से की गई है, जो कि काफी महत्वपूर्ण है. महत्वपूर्ण इस मायने में कि इससे पता चलता है कि आकाशगंगा में छोटे आकार के अनगिनत ग्रह हो सकते हैं. स्विटज़रलैंड में जिनेवा यूनिवर्सिटी के स्टिफेन उद्री के अनुसार, शोध से यह निष्कर्ष निकला कि आकाशगंगा में सूर्य जैसे कई छोटे आकार वाले ग्रह हैं. इससे साफ़ पता चलता है कि छोटे आकार वाले ग्रह हर जगह हैं. इन 32 नए ग्रहों की खोज के बाद अब सौर मंडल के बाहर खोजे गए ग्रहों की संख्या 400 हो गई है. समय-समय पर शोधकर्ता खगोलीय दूरबीनों और तकनीकों का इस्तेमाल कर इसकी खोज करते रहते हैं. इन 32 ग्रहों की खोज जिस दूरबीन से हुई है, उसका नाम है हार्प्स स्पेक्टोमीटर.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

आज हमारी सेना जिस जंग में लगी है, उसके मायने अब तक लड़ी गई सभी जंगों में अहम है. यह जंग किसी क्षेत्र के लिए नहीं है, बल्कि पाकिस्तान की आत्मा और उसके मतलब को बचाने की कवायद है.

पाकिस्तान को बचाने का आख़िरी मौक़ा

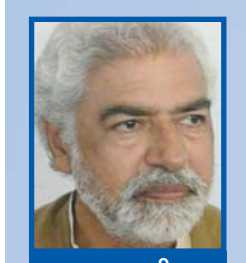

अयाज़ अमीर

कश्मीर में 1947–48 ही एक ज़रूरी जंग थी, जो हमने लड़ी. इस जंग से हमें कश्मीर का वह हिस्सा मिल गया, जो आज हमारे क़ब्ज़े में है. 1965 की भारत–पाक जंग एक पागल जनरल की सबसे बड़ी भूल थी. 1971 में भारत के ष्ठि लाफ़ एक बार फिर से खोला गया मोर्चा वह गर्त था, जो हमारी राजनीतिक विफलता के चलते पैदा हुआ. कारगिल की घटना किसी हालत में नहीं होनी चाहिए थी. अगर परवेज़ मुशर्रफ को कठघरे में खड़ा करने की ज़रूरत है तो उसकी वजह कारगिल में उनका खिलवाड़ करना है.

आज हमारी सेना जिस जंग में लगी है, उसके मायने अब तक लड़ी गई सभी जंगों में अहम है. यह जंग किसी क्षेत्र के लिए नहीं है, बल्कि पाकिस्तान की आत्मा और उसके मतलब को बचाने की कवायद है. मोहम्मद इक़बाल और मोहम्मद अली जिन्ना को यक़ीनन ओसामा बिन लादेन, अयमन अल जवाहरी और मुल्लाह ओमर से कोई मतलब न होता. आष्ठि र कैसे मध्यकालीन इतिहास के ये नुमाइंदे पाकिस्तान को खेल का मैदान बनाने में कारगर हुए. लेकिन जो बीत गया, सो बीत गया. अब हमें मौजूदा हालात से रूबरू होने की ज़रूरत है. इसी लिहाज़ से यह जंग अहम है. इस जंग को जीत कर ही हम पाकिस्तान को सही मायनों में सुरक्षित कर सकेंगे और पाकिस्तान के लिए एक सुनहरे भविष्य को संजो सकेंगे. इस जंग को हारने का महज़ ख्याल भी भयावह है. और अगर हार होती है तो वह पाकिस्तान को एक ऐसे अंधेरे गर्त में धकेल देगा, जहां यह भ्रम टूट जाएगा कि हमारी सेना पाकिस्तान की सुरक्षा में लगी अग्रिम पंक्ति है. लिहाज़ा इस युद्ध में हमारा सब कुछ दांव पर लगा है और हमारे पास जीतने के अलावा कोई दूसरा विकल्प नहीं है. यह भी तय है कि यह जीत इतनी आसान नहीं है. दक्षिणी वज़ीरिस्तान के लड़ाके जिनमें विदेशी तत्व भी शामिल हैं, दुनिया भर में सबसे कठोर लड़ाकों में हैं. वे पिछले कई दशकों से लगातार अफ़ग़ानिस्तान, कश्मीर और अब फाता में लड़ रहे हैं. वज़ीरिस्तान की इस दुर्गम टैरेन पर उनसे लड़ाई करना पाकिस्तानी सेना के लिए एक बड़ी चुनौती है.

इज़रायली सेना को महज़ तीन से पांच हज़ार हिजबुल्लाह लड़ाकों ने 2006 में शिक़स्त दी थी. 1989 में जब कश्मीर घाटी में आतंकवाद अपने चरम पर था तो उस वक़्त आतंकवादियों की संख्या पांच से दस हज़ार से ज़्यादा नहीं थी. लेकिन वे लंबे अर्से तक भारतीय सेना को परेशान करते रहे. एक अनुमान के मुताबिक़, दक्षिणी वज़ीरिस्तान में दस से पंद्रह हज़ार लड़ाके होंगे और आप अंदाज़ा लगा सकते हैं कि पाकिस्तानी सेना को वे कैसी चुनौती दे रहे हैं.

इस जंग से बचा नहीं जा सकता. यह जंग पाकिस्तान की सेना ने ष्ठु द नहीं चुनी, बल्कि उस पर थोपी गई है और आज वह इस जंग से कतरा नहीं सकती. सेना को यह जंग एक निर्णायक जीत के लिए लड़नी है, ष्ठ ासतौर पर तब, जबकि पूरा देश उसके साथ खड़ा है. तालिबान यह साफ़ कर चुका है कि शांति की कोई भी पहल उसकी शर्तों पर ही हो सकती है. अभी के लिए यह जंग ही राजनीति का एकमात्र रास्ता है, बाक़ी रास्ते तभी खुल सकेंगे, जब हथियारों की इस जंग को हम जीत लें.

दक्षिणी वज़ीरिस्तान में आतंक के सफ़ाए के लिए सेना की पिछली कवायदें पूर्व राष्ट्रपति परवेज़ मुशर्रफ के दौर में हुईं. यह कवायदें अधूरे मन और अधूरी तैयारी के साथ बिना किसी मक़सद के की गईं, लिहाज़ा सेना को भारी नुक़सान उठाना पड़ा था और तालिबानियों के मनोबल में ष्ठ ासा इज़ाफ़ा हुआ था. इस बार ऐसा नहीं लगता. सेना अपनी पूरी तैयारी के साथ जंग में उतरी है और उसे इस जंग का मक़सद पता है. अपने दौर में मुशर्रफ अमेरिकी हितों के आगे कठपुतली बने थे और आतंक के ष्ठि लाफ़ वह पाकिस्तान के हितों की रक्षा करने के बजाय अमेरिकी ष्ठु फ़िया एजेंसियों की ज़रूरतें पूरी करने में लगे थे. उनकी इस बेईमानी की एक बड़ी क़ीमत मुल्क की सेना को चुकानी पड़ी. लेकिन जिस तरह से हमने स्वात में सेना की कवायद को देखा, उससे साफ़ है कि सेना परवेज़ मुशर्रफ की बनाई नीतियों से बाहर निकल कर पाकिस्तान के हितों की रक्षा करने में लगी है. लेकिन यह महज़ एक शुरुआत है. इस इम्तहान में पास होने के लिए हमें अमेरिकी दृष्टिकोण से चीज़ों को देखना बंद करने की आदत डालनी होगी. जहां अमेरिकी मित्रता हमारे लिए गौरव की बात है, वहीं अमेरिकी निर्देशों और आदेशों को प्लेग जैसी घातक बीमारी मानते हुए बचने की ज़रूरत है. अमेरिका ने ऐसी जंगों की शुरुआत कर रखी है, जिन्हें ष्ठ त्म करना इतना आसान नहीं है. अफ़ग़ानिस्तान में अमेरिकी फौज सफलता से कोसों दूर है. अफ़ग़ानिस्तान में और अमेरिकी टुकड़ियों को तैनात करने के फ़ैसले में अमेरिका अनिश्चितता के दौर से गुज़र रहा है. इसके उलट हमारी सेना स्वात में आतंक को क़ाबू करने के बाद पाकिस्तानी हितों के लिए और भी मज़बूती के साथ आगे बढ़ रही है. इसका साफ़ मतलब है कि हमारी सेना के लिए जो मदद ज़रूरी है, जिसमें हेलीकॉप्टर और हथियार शामिल हैं, के सहारे हम इस जंग को जीतने की सही दिशा में जा रहे हैं. इस मदद के अलावा मिलने वाले अमेरिकी सुझावों और भाषणों से हमें बचने की ज़रूरत है.

इस जंग के बीच एक बात और क़ाबिले–ग़ौर है कि देश के राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री क्या अपनी ज़िम्मेदारियों से बच रहे हैं? ऐसे वक़्त में जब सेना देश के लिए एक अहम युद्ध लड़ रही है तो क्या उन्हें इस बात की ज़रूरत महसूस नहीं होती कि वे सेना का मनोबल बढ़ाने में योगदान करें. अगर मान लिया जाए कि वाना का इलाक़ा उनके दौरे के लिए ष्ठ तरे का सबब है तो क्या वे आसपास के इलाक़ों में बने सैनिक बंकरों तक भी जाना मुनासिब नहीं समझ रहे हैं. आष्ठि र आसिफ़ अली ज़रदारी सेना के सर्वोच्च कमांडर हैं और यह उनकी नैतिक ज़िम्मेदारी भी बनती है कि वह सेना के साथ खड़े नज़र आएं. यह बात अलग है कि देश के कितने लोग उनको इस किरदार में क़बूल करते हैं.

बहरहाल, पाकिस्तान में इतिहास लिखा जा रहा है कि इस जंग में अगर हम जीत हासिल करते हैं तो नदी के दूसरे छोर पर होंगे. अगर हार का सामना करना पड़ता है तो हमें सूडान और सोमालिया का इतिहास व भूगोल पढ़ने की ज़रूरत है. लेकिन एक बात साफ़ है कि तालिबान के सफ़ाए का कोई मतलब नहीं होगा, अगर पाकिस्तान में चीज़ें पहले जैसी ही रहीं. इस जीत का मायने तभी निकाला जा सकता है, जब हम तालिबान के सफ़ाए के तुरंत बाद पाकिस्तानी समाज की पुनर्स्थापना में लग जाते हैं.

तालीम को पाकिस्तान की पहली राष्ट्रीय समस्या के तौर पर देखे जाने की ज़रूरत है. हमें पूरे देश में एक समान शिक्षा पद्धति लागू करने की ज़रूरत है. लिहाज़ा, यह दौड़ तालिबान को शिक़स्त देने को बाद ष्ठ त्म नहीं होगी, बल्कि वह महज़ इस दौड़ की एक शुरुआत होगी.

(लेखक पाकिस्तान के वरिष्ठ पत्रकार और नेशनल असेंबली के सदस्य हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

spice
www.spice-mobile.com
अब सब खल्लास!
मल्टी–सिम M-4580 की आकर्षक कीमत और भरपूर खूबियाँ करे सबको खल्लास।
M-4580
किलर खूबी: बड़ी बैट्री
25 दिनों का स्टैंड–बाइ टाइम और 10 घंटों का टॉकटाइम
मल्टी–सिम (GSM/GSM)
MP3 प्लेयर और FM रिकार्ड
वन–टच टॉर्च और करैन्सी चेकर
4 GB तक एक्सपैन्डेबल मैमोरी
BEST BUY PRICE: Rs. 2149
M-5252
10 दिनों का स्टैंड–बाइ टाइम और 4 घंटों का टॉकटाइम
मल्टी–सिम (GSM/GSM)
डिजिटल कैमेरा
बिल्ट–इन FM एंटेना
ड्यूअल LED टॉर्च
8 GB तक एक्सपैन्डेबल मैमोरी
BEST BUY PRICE: Rs. 3049
C-5300
सभी CDMA कनेक्शन के साथ चले
बड़ी स्क्रीन
डिजिटल कैमेरा
MP3 प्लेयर और FM रिकार्ड
एक्सपैन्डेबल मैमोरी
वन–टच टॉर्च
BEST BUY PRICE: Rs. 2999
बड़ी स्क्रीन | बड़ी मैमोरी | बड़ा साउण्ड | बड़ी बैट्री
big series
Spice Mobiles come loaded with:
emergic email2sms Mail on Mobile | Shuffle Ring tone | mGurujee | ibibo i build · i bond | REUTERS | Mobile Tracker
Registered Office: Spice Mobiles Ltd., D-1, Sector-3, Noida 201301, Uttar Pradesh, India. Fax: +91-120-4363845. E-mail: contactus@spicemobile.in. Spice Mobile Phones are available at all leading telecom outlets. *Conditions apply. Price features and specifications are subject to change without prior notice. Some of the listed capacity is used for phone functions and thus available capacity could be less than the quoted figure. Battery operation time may vary depending on network usage, environment, music and video formats.
www.itsaugust.com

शरीर की कोशिकाओं के समूह का अनियंत्रित रूप से बढ़ना ही कैंसर है. जब यह तेज़ी से बढ़ने लगती हैं तो गांठ या ट्यूमर के रूप में शरीर के अंदर इकट्ठी होती चली जाती हैं और वही कैंसर का रूप ले लेती हैं.

कैंसर
समय से इलाज ज़रूरी है

यह एक ऐसा रोग है, जिसका सिर्फ़ नाम सुनकर ही लोग सहज घबरा उठते हैं. लेकिन, अब कैंसर लाइलाज नहीं रहा. ज़रूरत केवल इस बात की है कि मरीज सही समय पर सही डॉक्टर के पास पहुंच जाए और हिम्मत न हारे.

रीतिका सोनाली

मेरा सब कुछ छूट गया. स्कूल, टीचर और फ्रेंड्स...सब कुछ. मुझे बहुत बुरा लगता है. मेरी टीचर मुझे फोन करती हैं, फ्रेंड्स भी मिलने आते हैं, पर उनके पास वक़्त नहीं होगा. वे प्रैक्टिकल बना रहे होंगे. मन नहीं लगता है,

टाटा मेमोरियल हॉस्पिटल में अपना इलाज करा रहा ग्यारह वर्षीय अनमोल सूद इतना कहकर अपने आंसुओं को छिपाने के लिए आसमान की ओर देखने लगता है. वह फिर बताता है, मुझे एलर्जी हो गई थी, उसकी दवा दी गई, पर कोई लाभ नहीं हुआ. कुछ समय बाद पता चला कि मुझे एएलएल कैंसर है. मुझे घूमने-फिरने, ज़्यादा बात करने, खेलने-पढ़ने आदि के लिए मना कर दिया गया है. मुझे बिल्कुल अच्छा नहीं लगता, बात करते-करते अनमोल मां के आंचल से चेहरा ढंक लेता है. बेटे के आंसू देखकर उसकी मां भी ख़ुद को रोक नहीं पाती हैं.

तेरह वर्षीय अमन बताते हैं, एक दिन जब सुबह जागा तो मेरे गले में सूजन आ गई थी. पापा ने डॉक्टर को दिखाया तो उन्होंने बताया कि मम्स है. उसकी दवा की तो फ़ायदा नहीं हुआ. फिर एक बड़े डॉक्टर को दिखाया तो उन्होंने एम्स के लिए रेफर कर दिया. पता चला कि मुझे होडकिंस लिंफोमा कैंसर है. अमन की मां बताती हैं, टेस्ट से पहले कैंसर के लक्षण नहीं दिखे, न ही किसी प्रकार का दर्द हुआ. वह संदेश देना चाहती हैं कि कैंसर पूरी तरह से उपचारात्मक है, इसलिए जिन बच्चों को कैंसर हो, उनके माता-पिता हिम्मत न हारें और डॉक्टरी सलाह पर पूरी तरह अमल करें.

यही कहानी पंद्रह वर्षीय निकिता कार्निक की. जसलोक हॉस्पिटल में कैंसर जैसी ख़तरनाक बीमारी से लड़कर नई ज़िंदगी पाने वाली निकिता कहती हैं, मुझे महसूस हुआ कि कोई मेरे मन के तारों को हिला रहा है और मुझे कैंसर से लड़ने की ताक़त दे रहा है. उसके बाद दर्द का एहसास कम सा होता गया. ओवेरीयन जर्म कैंसर से पीड़ित होकर जब निकिता अस्पताल पहुंची तो डॉक्टरों ने उम्मीद ही खो दी थी. दवाइयों के साथ डॉक्टर ने सलाह दी हिम्मत और आत्मविश्वास बनाए रखने की और निकिता इसमें सफल रही. हालांकि नौ महीने तक इस बीमारी से लड़ते-लड़ते वह काफी कमज़ोर हो चुकी थी, पर उसकी हिम्मत देखकर बीमारी हार गई और जीत जीवन की हुई.

बच्चों का कैंसर

बच्चों को होने वाला कैंसर हताश करता है, निराश नहीं. यह बड़ों के कैंसर से काफी अलग होता है. यह बहुत तेज़ी से बढ़ता है और वक़्त पर पता चल जाने से यह ठीक भी हो जाता है, लेकिन इस दौरान बच्चे और उसके माता-पिता को जो कष्ट होता है, उसे बयान करना बेहद मुश्किल है. सही इलाज और देखभाल के अभाव में यह जानलेवा हो जाता है. राजीव गांधी कैंसर इंस्टीट्यूट एंड रिसर्च की चाइल्ड कैंसर स्पेशलिस्ट डॉ. गौरी कपूर बताती हैं कि बच्चों में कई प्रकार का कैंसर होता है. इसे दो मुख्य समूह में बांटते हैं. पहले समूह में ब्लड और हीमोग्लोबिन कैंसर जिसमें लिंफोमा और ल्यूकोमिया का समूह होता है, उसे रक्त हिमेटोलॉजिकल डिसऑर्डर कहते हैं. यानी एएलएल, एएमएल आदि. दूसरे प्रकार के कैंसर समूह में सॉलिड ट्यूमर या ठोस कैंसर होता है. यानी ब्रेन ट्यूमर, किडनी ट्यूमर, न्यूरोप्लास्टोमा, ऑस्टियोसारकोमा, मांसपेशी का कैंसर रैप्टोमायोसारकोमा, आंख की पुतली के अंदर का कैंसर रेटिनोब्लास्टोमा और जिगर का कैंसर हिपैटोब्लास्टोमा आदि.

कैंसर एक बीमारी नहीं है, बल्कि विभिन्न बीमारियों का योग है. कैंसर के लक्षण दरअसल ऐसे नहीं होते हैं जिनसे पता चले कि कैंसर ही है. इसके लक्षण दूसरी बीमारियों में देखे जाते हैं, इसलिए ऐसा कोई भी लक्षण नज़र आए और फिर उसका इलाज होने पर भी फ़ायदा न हो तो कैंसर के डॉक्टर को ज़रूर दिखाएं. वैसे बच्चों में ज़्यादातर ब्लड कैंसर के मामले देखने को मिलते हैं. कैंसर के प्रमुख लक्षणों में तीन-चार सप्ताह लंबा बुख़ार, किसी भी एंटीबायोटिक का फ़ायदा न करना, जिगर और तिल्ली बढ़ जाना, गर्दन-पीठ-जिगर या शरीर के किसी अंग में गिल्टी होना, पेट फूलना, सिर पर सूजन, पेशाब में ख़ून, ब्लड टेस्ट में हिमोग्लोबिन की कमी, अमीनोग्राम टेस्ट में व्हाइट ब्लड प्लेटलेट्स बढ़ना, रेड ब्लड प्लेटलेट्स घटना, हड्डियों में दर्द, ख़ून की कमी और पेशाब में ख़ून आना आदि शामिल है. बच्चे का सीबीसी टेस्ट कराने पर उसमें व्हाइट ब्लड प्लेटलेट्स की मात्रा बढ़ी हुई नज़र आए और एनीमिया (रक्त की कमी) हो तो तुरंत कैंसर के डॉक्टर को दिखाना चाहिए. कैंसर के लिए दो ख़ास टेस्ट हैं. ल्यूकीमिया बोनमैरो की जांच और ठोस कैंसर के लिए बायोप्सी. इसके अंतर्गत गिल्टी या गांठ में चीरा लगाकर मांस का छोटा-सा हिस्सा निकालकर जांच की जाती है. बच्चे को कैंसर है, यह पता चलने पर सबसे ज़्यादा सावधानी बरतने वाली बात है उसे किसी भी प्रकार के इन्फेक्शन से बचाना. इसके अलावा माता-पिता में धैर्य और सकारात्मक सोच का होना भी बहुत ज़रूरी है, जिससे बच्चे में हिम्मत व आत्मविश्वास बनाए रखा जा सके.

कैंसर के इलाज की कीमोथेरेपी, जिसमें दवाइयां और इंजेक्शन होते हैं, को उचित निगरानी में देना बेहद ज़रूरी है. वर्ना उसके स्थाई या अस्थाई साइड इफेक्ट्स हो सकते हैं. बच्चों को कैंसर से लड़ने की हिम्मत देने वाली कैनकिड्स नामक संस्था की नींव रखी है पूनम बगई ने. वह कहती हैं कि यह बीमारी न सिर्फ़ शारीरिक तौर पर तक़लीफ़देह है, बल्कि यह आत्मविश्वास को भी कमज़ोर करती है. ज़रूरत है इस रोग से लड़ने वाले हर आदमी और उसके प्रियजनों को हिम्मत देने की. यही काम करती है उनकी संस्था.

क्या है कैंसर

शरीर की कोशिकाओं के समूह का अनियंत्रित रूप से बढ़ना ही कैंसर है. शरीर के अंदर करोड़ों की तादाद में कोशिकाएं हैं. आमतौर पर यह सामान्य रूप से बढ़ती रहती हैं, लेकिन जब यह तेज़ी से बढ़ने लगती हैं तो गांठ या ट्यूमर के रूप में शरीर के अंदर इकट्ठी होती चली जाती हैं और वही कैंसर का रूप ले लेती हैं. राजीव गांधी कैंसर इंस्टीट्यूट एंड रिसर्च सेंटर के रेडियोथेरेपी विभाग के डॉक्टर के अनुसार, लिंफोमा टिश्यू में होती है और शरीर के किसी भी हिस्से पर गांठ के रूप में उभर आती है. इससे गर्दन, बगल या जांघ की गांठों में सूजन हो जाती है. लगातार बुख़ार आना, रात में पसीना आना, थकावट, अकारण वजन घटना, त्वचा में खुजली और लाली आदि इसके प्रमुख लक्षण हैं जो आसानी से नज़र आ जाते हैं. इनके नज़र आते ही तुरंत डॉक्टरी परामर्श लेना चाहिए.

कारण: यह बीमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता घटने, संक्रमण और कई अनिश्चित कारणों से होती है. आमतौर पर इस बीमारी के चार चरण होते हैं. सबसे ख़तरनाक चौथा चरण है, जिसमें सारे शरीर में गांठ बन जाती है. शुरुआती चरण में पता लगने पर इसके ठीक होने की संभावना तीस फीसदी तक होती है. इसलिए कभी भी गांठ को नज़रअंदाज़ करने की भूल न करें.

प्रमुख कैंसर

लंग कैंसर, ब्लड कैंसर, ब्रेन ट्यूमर, बच्चेदानी के मुंह का कैंसर, स्तन व हड्डी का कैंसर, पेट व आमाशय का कैंसर, प्रोस्टेट व किडनी का कैंसर और मुंह, गले व त्वचा का कैंसर. कुछ हिस्सों के कैंसर को छोड़ दिया जाए तो पुरुषों व स्त्रियों में होने वाले कैंसर की प्रकृति अलग-अलग है.

कैंसर के लक्षण

- शरीर पर बने किसी भी तरह के सुराख़ से ख़ून के साथ डिस्चार्ज.
- बलगम के साथ ख़ून आना.
- आवाज़ में आया बदलाव तीन-चार सप्ताह तक ठीक न होना.
- हमेशा हल्का बुख़ार रहना.
- भूख न लगना और वजन कम होना.
- मुंह के अंदर जख्म होना और इलाज कराने के बाद भी तीन-चार सप्ताह तक ठीक न होना.

पुरुषों में कैंसर

पुरुषों में मुंह, गले, फेफड़े व प्रोस्टेट का कैंसर आम है. तंबाकू व गुटखा खाने और धूमपान की वजह से पुरुषों में मुंह व गले का कैंसर आम है.

महिलाओं में कैंसर

महिलाओं में स्तन, पित्त की थैली व गर्भाशय के मुंह का कैंसर अधिक देखने में आता है. रॉकलैंड अस्पताल की स्त्री रोग विशेषज्ञ डॉ. आशा शर्मा के अनुसार, महिलाओं में यौन संक्रमण की वजह से गर्भाशय के मुख का कैंसर एवं विलंब विवाह व स्तनपान की उपेक्षा करने की वजह से स्तन कैंसर प्रमुख रूप से होता है.

स्तन कैंसर : भारत के महानगरों दिल्ली और मुंबई में स्तन कैंसर पहले नंबर पर है. मोटापा, शराब का सेवन व धूम्रपान, देर से रजोनिवृत्ति और जीन में बदलाव होने से स्तन कैंसर का ख़तरा बढ़ जाता है. इसके अलावा मां, बहन या पिता को होने से भी इसका ख़तरा बढ़ता है. स्तन कैंसर की जांच महिला ख़ुद कर सकती है. चालीस साल की उम्र के बाद हर साल महिलाओं को मैमोग्राम एक्सरे कराना चाहिए. चिकित्सकीय जांच की तुलना में मैमोग्राम से कैंसर का पता तीन साल पहले चल जाता है. कम उम्र की महिलाओं को मैमोग्राम टेस्ट के बजाय एमआरआई को प्राथमिकता देनी चाहिए. स्तन कैंसर से बचाव के लिए महिलाओं को पश्चिमी देशों की जीवनशैली जैसे वसायुक्त भोजन, धूम्रपान और शराब के सेवन से बचना चाहिए. इसके अलावा व्यायाम को तरज़ीह दें. स्तन कैंसर के प्रमुख लक्षणों में स्तन में गांठ बनना और निप्पल से हल्का ख़ून जैसा डिस्चार्ज होना आदि शामिल है. हर साल दुनिया में स्तन कैंसर के ग्यारह लाख मामले सामने आते हैं, जिनमें एक लाख मामले भारत के होते हैं. लेकिन अच्छी बात यह है कि इससे होने वाली मौतों में कमी आई है, क्योंकि जल्द पता लगने पर इसका इलाज संभव है.

फोटो–*प्रभात पाण्डेय*

गर्भाशय का कैंसर : भारत में प्रति वर्ष सरवाइकल कैंसर से मरने वाली महिलाओं की संख्या 74000 है, जो पूरे विश्व की तुलना में सबसे ज़्यादा है. हालांकि अब इसके वैक्सीन एचवीपी आने के बाद अनुमान लगाया जा रहा है कि यह देश में होने वाले 75 प्रतिशत सरवाइकल कैंसर को दूर करेगा. इस प्रकार के कैंसर की पहचान बहुत आसानी से की जा सकती है. इसके होने की कई वजहें हो सकती हैं. जैसे बार-बार गर्भवती होना या बार-बार गर्भ गिरना, कम उम्र में शारीरिक संबंध, अनेक लोगों से संबंध आदि.

इसके अलावा सिगरेट व शराब के सेवन और परिवार में किसी को इस प्रकार का कैंसर होने पर भी इसकी आशंका बढ़ जाती है. कैंसर होने के बाद थोड़ा वक़्त बीत जाने पर बाद संभोग में अत्यधिक दर्द, रक्तस्राव, भूख न लगना, पेडू का दर्द, वजन कम होना, थकान, कमर दर्द, पैर दर्द, पैरों में सूजन आदि की शिकायत हो सकती है. इससे बचाव के लिए खानपान पर विशेष ध्यान देने की ज़रूरत है. खाने में विटामिन ए, फल व सब्जियां, विटामिन ई, विटामिन सी, फॉलिक एसिड, कैरोटीनॉयड्स लेना बेहद ज़रूरी है. ये अन्य फ़ायदों के साथ गर्भाशय के मुख के कैंसर को जल्दी होने से भी बाधित करते हैं.

कैंसर का इलाज

कैंसर की पुष्टि होने पर सर्जरी, कीमोथेरेपी और रेडियोथेरेपी की प्रक्रिया अपनाई जाती है. उनके अनुसार यदि सही समय पर इलाज मिल जाए तो अस्सी फीसदी कैंसर से मुक्ति मिल जाती है.

बचाव के उपाय

डॉ. के. के अग्रवाल के मुताबिक़, कैंसर से बचाव के लिए भोजन में सातों रंग की चीजों को शामिल करें. फूलगोभी, ब्रोकोली, हरी फूलगोभी, पत्तागोभी और अंकुरित बीज आदि. इनमें आईसोथायोसायनेट नामक रसायन मौजूद होता है, जो कैंसर के आक्रमण में प्रतिरोधी क्षमता बढ़ाता है.

- धूम्रपान व पान मसाले के सेवन से बचें.
- फास्टफूड व जंकफूड से दूर रहें.
- शारीरिक श्रम करें.
- 35 वर्ष की उम्र होने के बाद हर साल डॉक्टर से जांच कराएं.
- पाश्चात्य जीवनशैली से तौबा करें.

ritika@chauthiduniya.com

राशिफल

(2 नवंबर–8 नवंबर)

मेष (21 मार्च से 20 अप्रैल)

प्रतियोगी परीक्षाओं में आपकी सफलता के योग बने हुए हैं. घरेलू कार्यों में आपकी व्यस्तता रहेगी. बिना सोच-विचार किए कोई नया काम शुरू न करें. आपकी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी. आर्थिक मामलों में किए जा रहे आपके प्रयास सफल होंगे.

वृष (21 अप्रैल से 20 मई)

दूसरों के काम में आप मददगार साबित होंगे. वाणी पर नियंत्रण रखें. संबंधों में तनाव उत्पन्न होने की आशंका है. भौतिक सुख-साधनों पर व्यय अधिक होगा. ख़र्च सोच विचार कर करें. अपनी सेहत पर ध्यान दें. भोजन कम मात्रा में करें.

मिथुन (21 मई से 20 जून)

आपके धार्मिक यात्रा पर निकलने के योग बन रहे हैं. आध्यात्मिक और ईश्वर भक्ति से आपके मन को शांति मिलेगी. परिवार के लोगों का सहयोग प्राप्त होगा. आर्थिक मामलों में सावधानी बरतें. नेत्र विकार से ग्रस्त होने की आशंका हैं.

कर्क (21 जून से 20 जुलाई)

राजनीतिक दिशा में किए जा रहे प्रयास सफल होंगे. रुपये-पैसों के लेन-देन में विशेष सावधानी बरतने की आवश्यकता है. आपको शासन सत्ता का सहयोग मिलेगा. किसी अधीनस्थ अधिकारी या सहयोगी का सहयोग भी आपको मिलेगा.

सिंह (21 जुलाई से 20 अगस्त)

परस्पर मिलकर लिए गए निर्णय सार्थक होंगे. आपकी पदोन्नति के योग बने हुए हैं. आपके मान-सम्मान में वृद्धि होगी. मित्रों से लाभ की संभावना बनी हुई है. मांगलिक कार्यों के लिए किए जा रहे प्रयास सफल होंगे. अपने सामान की सुरक्षा के प्रति जागरूक रहें. कार्यों की अधिकता रहेगी.

कन्या (21 अगस्त से 20 सितंबर)

लंबे समय से चली आ रही समस्या का अंत हो जाएगा. नजदीकी लोगों का सहयोग मिलेगा. आपके निर्णय लेने की क्षमता बढ़ेगी. आर्थिक मामलों पर चल रहे प्रयास सफल होंगे. वरिष्ठ अधिकारियों से बातचीत करते समय विवेक से काम लें.

तुला (21 सितंबर से 20 अक्टूबर)

जीवनसाथी का भरपूर सहयोग मिलेगा. यदि आप किसी कार्यवश यात्रा करना चाहते हैं, तो उस कार्य में सफलता मिलेगी. अचानक ख़र्च बढ़ सकते हैं. क़र्ज़ लेकर कभी कोई कार्य न करें, नुकसान होने की आशंका है.

वृश्चिक (21 अक्टूबर से 20 नवंबर)

ससुराल पक्ष का भरपूर सहयोग मिलेगा. हानि-लाभ के बारे में विचार करने के बाद ही किसी कार्य को संपन्न करें. मित्रों से सहयोग की संभावना बनी हुई है. सामाजिक कार्यों में भाग लेने से मन प्रसन्न रहेगा. वाणी पर संयम रखें.

धनु (21 नवंबर से 20 दिसंबर)

ईश्वर के प्रति आपकी आस्था बढ़ेगी. अपने लोगों से कार्य निकालने में आप सफल होंगे. परिवर्तन के लिए चल रहे प्रयास सफल होने की उम्मीद है. व्यवसायिक वर्ग के लोगों के लिए संभलकर चलना आवश्यक है. धन, सम्मान, पद और प्रतिष्ठा की दिशा में चल रहे प्रयास सफल होंगे.

मकर (21 दिसंबर से 20 जनवरी)

मन में उठ रही नकारात्मक भावनाओं पर संयम रखना ज़रूरी है. नए कार्य प्रारंभ कर पाने में आप सफल रहेंगे. पारिवारिक वातावरण में सुख-शांति बनी रहेगी. बेहतरी की दिशा में आपके प्रयास सफल होंगे. मांगलिक कार्य संपन्न होंगे.

कुंभ (21 जनवरी से 20 फरवरी)

उन्नति के लिए किए जा रहे प्रयास सफल होंगे. निकट संबंधियों से संबंध मधुर होंगे. संतान के संबंध में सुखद समाचार मिलने की उम्मीद है. प्रतियोगी परीक्षा में सफलता के योग बने हुए हैं. आर्थिक क्षेत्र में सोच-विचार कर ही कोई निर्णय लें.

मीन (21 फरवरी से 20 मार्च)

वाद-विवाद की स्थिति आपके लिए हितकर नहीं होगी. आपकी आर्थिक योजना सफल होगी. देव दर्शन के योग बने हुए हैं. परिवार के लोगों के मध्य सुखद समय गुज़रेगा. व्यक्ति विशेष से तनाव मिल सकता है. अचानक आपको कहीं यात्रा करनी पड़ सकती है.

ज्योतिषाचार्य पं. सुदर्शन

हरिद्वार बहुत कम क्षेत्रफल वाला कुंभनगर है. प्रयाग, उज्जैन और नासिक इससे काफी बड़े शहर हैं और वहां कुंभ के आयोजन के लिए पर्याप्त ख़ाली जगह भी है, जो शहरी भू-भाग से अलग है.

देह के बाज़ार होने की गाथा

अनंत विजय

हिंदी में चल रहे स्त्री विमर्श की आंधी के बीच हाल के दिनों में एक ख़ास प्रवृत्ति सामने आ रही है. महिलाओं के लेखन में यौन संबंधों को बेहद सूक्ष्मता और प्रमुखता दी जाने लगी है. चाहे वह अप्राकृतिक यौन संबंध हो या फिर पति की उपेक्षा से ग़ैर मर्द की ओर आकर्षित होकर यौन संबंध बनाने का वर्णन. इस तरह के लेखन को कहानी की मांग कहकर जायज़ ठहराने की कोशिश भी की जाती है. शरद सिंह के उपन्यास पचकौड़ी में भी सेक्स संबंधों को सूक्ष्मता से विश्लेषित किया गया है और अब लता शर्मा का सामयिक प्रकाशन, दिल्ली से जो नया उपन्यास *सही नाप के जूते* प्रकाशित हुआ है, उसमें भी मां-बेटी की कहानी के बहाने यौन संबंधों को सायास लाया गया है. इस उपन्यास के केंद्र में भी स्त्री ही है. यह पूरा का पूरा उपन्यास एक लड़की उर्वशी और उसकी मां की महत्वाकांक्षाओं के इर्द-गिर्द चक्कर लगाता है. एक छोटे से क़स्बे की लड़की और उसकी मां की महत्वाकांक्षा के हिलोरें लेने की कहानी है यह उपन्यास. उर्वशी की मां ने अपनी बेटी और अपने लिए जो सपने देखे थे, उन सपनों को पूरा करने में वह उर्वशी के छुटपन से ही जुटी थी. वह अपनी बेटी की देह को अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए सीढ़ी की तरह इस्तेमाल करती है और योजनाबद्ध तरीक़े से उस पर अमल भी करती है. जब उर्वशी छोटी थी, उस वक़्त से ही उसकी मां उसके शरीर पर गर्म राख मला करती थी, ताकि उसके शरीर पर रोएं न निकल सकें और त्वचा की चिकनाहट बनी रह सके, साथ ही बना रहे देह का सौंदर्य. लेकिन उर्वशी अपनी देह के प्रति बचपन से ही तटस्थ रही. जब से उसने होश संभाला, मां के आदेश पर निर्वस्त्र होने की उसे आदत सी हो गई है.

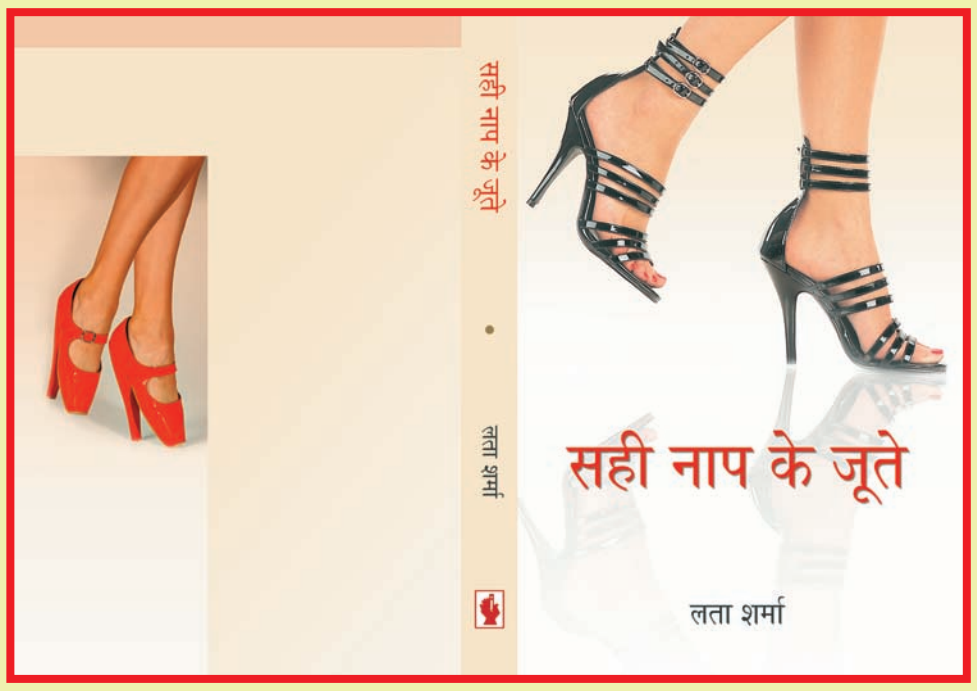

कहानी आगे बढ़ती है और साथ ही बढ़ती जाती है एक मां की महत्वाकांक्षा भी. मां अपनी बेटी के शरीर को तो तराशती ही है, साथ ही उसके दिमाग़ को भी अपनी योजना के हिसाब से तैयार करती जाती है. वह अपनी बेटी को देह के अर्थशास्त्र के बारे में बताकर आने वाले समय के लिए उसको तैयार करती है. मां अपनी बेटी से कहती है, भारत ही नहीं, पूरे विश्व में समाज की सोच सामंतवादी है. स्त्री उसकी संपत्ति है, पूंजी है. वह स्त्री के श्रम, सौंदर्य और बुद्धि सब पर स्वामित्व जमा लेता है. उसका उपभोग करता है. उसका निवेश कर स्त्री को दस या बीस प्रतिशत का लाभांश दे दे तो बहुत समझो. तुम्हारी देह, तुम्हारा मस्तिष्क तुम्हारी पूंजी है. अंततः उसका निवेश होना ही है, तो तुम स्वयं करो, कम से कम अस्सी प्रतिशत लाभांश तो मिलेगा. मां की नज़रों में पुरुष व्यापारी है और उसने यह दुनिया अपने सुख और संतोष के लिए रची है. जीवन को शुद्ध व्यापार समझने वाली महिला अपनी बेटी को देह के अर्थशास्त्र की घुट्टी पिलाते हुए उसके दिमाग़ में ये बातें कूट-कूट कर भर देती है कि देह के कम से कम निवेश से अधिकतम लाभ अर्जित करना ही जीवन का ध्येय होना चाहिए.

योजनाबद्ध तरीक़े से की गई मां की मेहनत और उर्वशी की क़िस्मत रंग लाती है और वह मिस इंडिया चुन ली जाती है. फिर शुरू होता है ग्लैमर की दुनिया का वह रास्ता, जहां से आगे तो जाया जा सकता है, लेकिन पीछे लौटना लगभग नामुमकिन है. मां और बेटी दोनों के जीवन में एक साथ तीन घटनाएं घटती हैं. मां ने मुंबई की कफ परेड की शानदार इमारत सागर रत्ना में पांच करोड़ रुपये का फ्लैट ख़रीदा, पापा सरकारी क्वार्टर में छूट गए और उर्वशी का कौमार्य भंग हुआ. जब पहली बार उर्वशी का कौमार्य भंग होता है तो उसकी मां को इसका कोई अफ़सोस नहीं होता. वह इस घटना को व्यवसायगत जोख़िम या ऑक्यूपेशनल हज़ार्ड कहकर बेटी को तसल्ली देती है और उसको इस तरह के जोख़िमों के लिए मानसिक रूप से तैयार कर देती है. मानसिक रूप से बेटी को तैयार करने के अलावा वह अपनी बेटी को डॉक्टर के यहां ले जाकर उसके गर्भाशय में इंट्रा यूरिटरी डिवाइस (गर्भ ठहरने के झंझट से मुक्ति) लगवाकर निश्चिंत हो जाती है.

इसके बाद कहानी बेहद तेज़ रफ़्तार से आगे चलती है और उर्वशी पहले मिस वर्ल्ड और फिर फ़िल्मों की नायिका के रूप में सफलता के झंडे गाड़ती जाती है. लेकिन फिर शुरू होता है ग्लैमर की दुनिया का स्याह रास्ता और उर्वशी रू-ब-रू होती है उस बेरुख़ी दुनिया से, जो स्त्री देह को भोगने के बाद डंप कर देती है. कहानी एक नया मोड़ लेती है और अपने जिस छोटे भाई चीनू को वह जान से भी ज़्यादा प्यार करती थी, एक दिन वह अपने लाभ के लिए अपनी बहन के जिस्म का सौदा कर डालता है. कहानी जब क्लाइमेक्स की ओर बढ़ती है तो न तो कहीं चौंकाती है और न ही कोई झटका देती है, बेहद सामान्य ढंग से ख़त्म होती है. पाठक को इस उपन्यास में लगातार यह आभास होता चलता है कि आगे क्या-क्या घटित होने वाला है, कहानी में क्या मोड़ आने वाला है, कौन सा पात्र कौन सी चाल चलने वाला है आदि-आदि .

लता शर्मा ने जिस विषय को अपने इस उपन्यास में उठाया है, उस पर हिंदी में सैकड़ों कहानियां और दर्ज़नों उपन्यास लिखे जा चुके हैं. साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त वरिष्ठ लेखक सुरेंद्र वर्मा के चर्चित उपन्यास *मुझे चांद चाहिए* की कहानी भी कमोबेश इसी थीम पर है. फ़र्क़ इतना है कि सुरेंद्र वर्मा के उपन्यास में नायिका की अपनी महत्वाकांक्षा उसे आगे बढ़ाती है, जबकि लता शर्मा के यहां नायिका की मां की महत्वाकांक्षा.

इस उपन्यास की कई घटनाएं और स्थितियां कुछ दिनों पहले आई मधुर भंडारकर की फिल्म *फैशन* की घटनाओं और स्थितियों से भी मेल खाती हैं. कभी महिलाएं मजबूरी में तो कहीं महत्वाकांक्षा की शिकार होकर वह ग्लैमर की स्याह दुनिया में उतरती हैं, जैसा कि यशराज की फिल्म *लागा चुनरी में दाग़* की नायिका करती है, जो पारिवारिक परिस्थितियों और हालात की वजह से अपनी देह का सौदा करती है. लेकिन हर जगह हालात और मजबूरी नहीं, बल्कि कहीं वह महत्वाकांक्षा के बोझ तले यह रास्ता स्वेच्छा से चुनती है. लेकिन हर स्थिति में उसका अंत कमोबेश एक जैसा ही होता है, अलग होता है पेश करने का अंदाज़. लता शर्मा ने इस उपन्यास को स्त्री विमर्श की चासनी में लपेट कर पेश करने की चालाक कोशिश की है. हो सकता है कि हल्के लेखन को पसंद करने वाले पाठकों को यह उपन्यास भा जाए, लेकिन हिंदी साहित्य में यह उपन्यास कोई छाप नहीं छोड़ पाएगा, न ही गंभीर साहित्य की अपेक्षा करने वाले पाठकों या आलोचकों को यह उपन्यास अपनी ओर आकर्षित कर पाएगा.

(लेखक आईबीएन7 से जुड़े हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

मृत्यु-भय का विश्लेषण

देवेन्द्र झा

वस्तुओं के नष्ट होने पर भी व्यक्ति जीवित रहता है और वस्तुओं को पुन: एकत्र करने में जुट जाता है. लेकिन जब किसी शारीरिक आपदा से ग्रस्त होने लगता है तो एक प्रश्न उसे भयभीत कर देता है. यह स्वाभाविक प्रश्न होता है – कहीं यह रोग उसकी जान तो नहीं ले लेगा? व्यक्ति इस संशय से ग्रस्त होते ही भयभीत होने लगता है. यह भय बार-बार उत्पन्न होता है, क्योंकि कोई न कोई शारीरिक कष्ट उसके जीवन में आता ही रहता है. यह भय गंभीर रुप तब धारण करता है जब व्यक्ति किसी असाध्य रोग से पीड़ित हो जाता है. अत: इस भय से मुक्त होना आवश्यक है और इसके लिए मृत्यु-भय का विश्लेषण करना ज़रुरी है. मृत्यु जीवन का अंत है, अत: मृत्यु को समझने के लिए यह आवश्यक है कि जीवन को समझा जाए. जीवन व्यक्ति को चार चीज़ें दे सकता है – शारीरिक सुख, पारिवारिक सुख, कामना-तुष्टि और मोक्ष. पहली तीन चीज़ें उनके लिए महत्वपूर्ण हैं जो भौतिक धरातल पर सक्रिय होते हैं और चौथी चीज़ उनके लिए महत्वपूर्ण होती है जो आध्यात्मिक धरातल पर कार्यरत होते हैं. भौतिक धरातल पर जीने वाले उपर्युक्त तीन चीज़ों को पाने के लिए अनवरत प्रयत्नशील होते हैं इन चीज़ों का एक स्वभाव व्यक्ति को क्रियाशील रखता है- वह है इनकी क्षणभंगुरता. इसका तात्पर्य यह है कि इन चीज़ों को पाने का आनंद उसी क्षण तक रहता है जब तक इन्हें पाया जा रहा हो. उसके उपरांत आनंद की सिर्फ़ याद रह जाती है. उस आनंद को फिर से पाने के लिए व्यक्ति को उस प्रक्रिया से पुन: गुज़रना पड़ता है. इनके उदाहरण में आते हैं भोजन-सुख, काम-वासना सुख, इन्द्रिय-जनित अन्य सुख. इन सुखों से व्यक्ति सदा के लिए तृप्त नहीं हो सकता है, क्योंकि इनके अस्तित्व की क्षणिकता बुलबुले के सदृश होती है. कुछ प्राप्तियां अपेक्षाकृत अधिक समय तक साथ रहती हैं, जैसे संपत्ति, बंधु-बांधव इत्यादि. परंतु ये भी नश्वर हैं ऐसा मानने के लिए लोग तैयार नहीं होते. लेकिन इनकी क्षणभंगुरता का ज्ञान तब होता है जब अनायास किसी कारणवश अथवा परिस्थितिवश ये नष्ट हो जाते हैं. तब इस बात का अहसास होता है कि ये समस्त प्राप्तियां अंततोगत्वा नश्वर हैं भले ही जीवन भर साथ दें. परंतु मृत्यु के पश्चात ये व्यक्ति के साथ नहीं जाते. अत: भौतिक प्राप्तियां व्यक्ति का साथ छोड़ देती हैं चाहे जीवन काल में अथवा जीवनोपरांत. अंत में व्यक्ति अपने साथ शून्य लेकर जाता है. इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जीवन भर किए गए प्रयास का अंतिम फल अगर शून्य ही है तो व्यक्ति दीर्घकाल तक जीता है अथवा अल्पकाल तक, इससे व्यक्ति को कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता. अत: मृत्यु का भय उसे कदापि नहीं होना चाहिए जो सांसारिक जीवन जी रहा है. परंतु सांसारिक जीवन जीने वाला दीर्घ जीवन की कामना इसलिए करता रहता है क्योंकि वह मोहग्रस्त होता है. जिससे उसका बिछोह अंततोगत्वा निश्चित है, उससे वह बिछुड़ना नहीं चाहता, उसे छोड़ना नहीं चाहता.

जो व्यक्ति आध्यात्मिक जगत में क्रियाशील होते हैं और प्रभु-प्राप्ति, मोक्ष-प्राप्ति इत्यादि जिनका लक्ष्य होता है, उनकी अभिलाषा होती है कि उनका जीवन दीर्घ हो ताकि इसी जन्म में उन्हें लक्ष्य की प्राप्ति हो जाए और उन्हें दूसरा जन्म न लेना पड़े. ऐसे व्यक्ति कम आयु में मृत्यु के आगमन को स्वीकार नहीं कर पाते जिनका एकमात्र लक्ष्य होता है प्रभु को पाना. पर इन्हें अपनी आध्यात्मिक प्रगति की गति से अनुमान लगाना चाहिए कि प्रभु तक पहुंचना इस जन्म में उनके लिए संभव प्रतीत हो रहा है अथवा नहीं. प्रभु की सन्निकटता का स्पंदन उसे इस बात के लिए आश्वस्त करने में सक्षम होता है कि जब तक वह अपने इस परम लक्ष्य को पा नहीं लेता, मृत्यु उसे छू तक नहीं पाएगी. अत: ऐसे दिव्य

विभुति मृत्यु भय से बिल्कुल मुक्त होते हैं. पर अगर कामना-तुष्टि का भाव प्रबल बनकर साधक के जीवन में सदैव अदम्य बाधा के रूप में होता रहे और साधक बार बार गिरता रहे और उठता रहे तो इस अवस्था में प्रभु-प्राप्ति का भाव पल्लवित-पुष्पित नहीं हो सकता. प्रयत्न करने पर भी अगर साधक इस बाधा को दूर नहीं कर पाता तो यह इस बात का संकेत है कि उसके लिए प्रभु प्राप्ति इस जीवन में संभव नहीं है. अब अगर इस परम लक्ष्य के प्राप्त होने की संभावना समाप्त ही हो जाए तो फिर मृत्यु कब आए इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है? इस परिस्थिति में जीवन की दीर्घता अपना अर्थ खो देती है. अत: उपर्युक्त तीनों अवस्थाओं में मृत्यु-भय से ग्रस्त होना निरर्थक है और तत्व-ज्ञान की कमी का परिचायक है. अगर हम सूक्ष्मता से जीवन के तथ्यों का सम्यक विश्लेषण करें तो इस निष्कर्ष पर पहुंचेंगे कि व्यक्ति सदैव निर्भय हो सकता है.

(लेखक प्रसिद्ध इंजीनियर हैं.)

feedback@chauthiduniya.com

मेज़बान के पास जगह की कमी

डॉ.कमलकांत बुधकर

महाकुंभ में सब कुछ महा-महा है! महाकुंभ के महा ख़र्चे हैं. आने वालों की संख्या का अनुमान महा है. सरकार कहती है कि पांच करोड़ मेहमान आएंगे. उन्हें देखते हुए क़रीब साढ़े पांच सौ करोड़ रुपये के ख़र्चे व्यवस्थाओं पर किए जाने को अधिकारी वर्ग तत्पर है! उत्तराखंड सरकार द्वारा तीन सौ करोड़ रुपये मेला प्रशासन के खाते में अब तक जमा किए जा चुके हैं. उसमें से डेढ़ सौ करोड़ अब तक निपट भी चुके हैं! करोड़ों के काम चल रहे हैं और करोड़ों के स्थाई-अस्थाई काम अभी शेष हैं. उनकी पड़ताल आने वाले दिनों में इस पृष्ठ पर की जाएगी. फ़िलहाल हरिद्वार की अतिथि क्षमता की चर्चा करें. क्या सचमुच हरिद्वार में आगामी महाकुंभ में पांच करोड़ लोग आएंगे? अगर इतनी संख्या में लोग सचमुच आ गए तो क्या हरिद्वार इतनी बड़ी संख्या में आने वाले अपने मेहमानों का स्वागत कर पाएगा?

दरअसल हरिद्वार देश के शेष तीन कुंभनगरों की तुलना में बहुत कम क्षेत्रफल वाला कुंभनगर है. प्रयाग, उज्जैन और नासिक हरिद्वार से काफी बड़े शहर हैं और वहां कुंभ के आयोजन के लिए पर्याप्त ख़ाली जगह भी है, जो शहरी भू-भाग से अलग है. इधर हरिद्वार में कुंभ का आयोजन क्षेत्र शहर के बीच में ही है. हरिद्वार का कुल क्षेत्रफल 12.47 वर्ग किलोमीटर है. इसी में गंगा नदी है, गंगनहर है, दो-दो पहाड़ हैं, बीएचईएल कारखाने के अलावा सिड़कुल नामक औद्योगिक क्षेत्र विकसित है. होटलों, धर्मशालाओं, मठों, आश्रमों, अखाड़ों और रिहायशी बस्तियों के अलावा सरकारी संपत्तियां हैं. इसी दायरे में है यहां का मुख्य स्नान स्थल यानी हरकी पौड़ी, जो सन् 2004 के अपने पिछले विस्तार के बावजूद कुल मिलाकर 7200 वर्गमीटर क्षेत्र में ही सिमटा है. यही छोटा सा स्थान है, जो हरिद्वार आने वाले देशी-विदेशी पर्यटकों और तीर्थयात्रियों की मंज़िल होता है. इसी स्थान पर साधु- संतों के परंपरागत अखाड़े और जमातें शाही स्नान करते हैं! शाही स्नान, सवारियों और जुलूसों को देखने के लिए कुंभ के अवसर पर लोग जुटते हैं. हर कुंभ यात्री का सपना शाही सवारी और स्नान देखना होता है और साथ ही हरकी पौड़ी पर पुण्य स्नान करना होता है, लेकिन अधिकांश का यह सपना पूरा नहीं होता. इसका एकमात्र कारण हरिद्वार में जगह की कमी है और यह कमी लगातार बढ़ती ही जा रही है. सन् 1927 के अंग्रेज कुंभ मेलाधिकारी डब्लू बी क्रिस्टी ने अपनी रिपोर्ट में लिखा था कि हरिद्वार में कुंभक्षेत्र लगातार सिकुड़ता जा रहा है. अगर मेला भूमि पर होने वाले अतिक्रमण को न रोका गया तो आने वाले समय में हरिद्वार में कुंभ का आयोजन कठिन हो जाएगा. आज तिरासी साल बाद क्रिस्टी की यह बात सच साबित हो रही है, जब मेला प्रशासन मेले को हरिद्वार से दूर ले जाने को मजबूर है.

सन् 2004 में गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय के पत्रकारिता के प्रशिक्षुओं ने इन पंक्तियों के लेखक के निर्देशन में हरिद्वार की अतिथि क्षमता पर एक व्यापक सर्वेक्षण किया था. सरकारी झूठ पर अख़बारी मुहर शीर्षक वाले इस सर्वेक्षण के नतीजे बेहद चौंकाने वाले थे, क्योंकि वे सरकार और प्रेस दोनों के लिए दोधारी तलवार बनकर आए थे. हरिद्वार जैसी छोटी सी जगह में एक दिन के पर्व स्नान में लाखों-लाख तीर्थयात्रियों के आने-नहाने की सरकारी और अख़बारी रिपोर्ट्स उस सर्वेक्षण के नतीजों से झूठी साबित हो रही थीं. इसीलिए ये दोनों वर्ग सर्वेक्षण के परिणामों से नाराज़ भी थे. लेकिन आज जब एक बार फिर पांच करोड़ तीर्थयात्री आने के दावे सामने आ रहे हैं तो पांच वर्ष पहले हुए उस सर्वेक्षण को याद कर लेना कम रोचक न होगा.

अपनी तरह के पहले और फ़िलहाल अंतिम उस सर्वेक्षण में यह नतीजे सामने आए कि हरकी पौड़ी सहित हरिद्वार के समस्त स्नान घाटों का क्षेत्रफल 23,347 वर्गमीटर है. स्नान के लिए पूरे दिन इन तमाम घाटों पर समा सकने वाले स्नानार्थियों की संख्या का जो आंकड़ा सर्वेक्षण से निकला, उसके मुताबिक़ छह लाख से अधिक स्नानार्थी हरिद्वार के घाटों पर गंगा स्नान नहीं कर सकते थे. अब अगर 2010 के कुंभ की प्रत्याशा में पिछले पांच वर्षों में, मान लें कि स्नान घाट दुगने भी बढ़े होंगे और कुंभ को देखते हुए हम आगंतुकों की अनुमानित संख्या भी दुगनी होनी मान लें तो भी यह संख्या बीसेक लाख ही बैठेगी. इस हिसाब से कुंभ के तीन प्रमुख स्नानों पर अगर साठ लाख स्नानार्थी मानकर चलें तो शेष छह प्रमुख स्नानों पर 12 लाख व्यक्ति प्रति स्नान के हिसाब से बहत्तर लाख ही चौबीसों घंटे के सतत् स्नान में नहा सकेंगे. कुल मिलाकर चार महीनों में अधिकाधिक यह संख्या एक करोड़ 32 लाख से अधिक नहीं होगी. फिर भी सरकारी दावे पांच करोड़ के ही चल रहे हैं.

अब अगर हरिद्वार में आगंतुक यात्रियों के ठहरने की व्यवस्था पर दृष्टि डालें तो उस सर्वेक्षण के मुताबिक़, हरिद्वार में 197 धर्मशालाएं, 108 होटल और लॉजिंग हाउस तथा 625 मठ-आश्रम हैं, जहां कुल मिलाकर दो लाख अठारह हज़ार लोग ही ठहर सकते थे. इनके अलावा रानीपुर और शिवालिक नगर समेत पंचपुरी हरिद्वार की जनसंख्या को देखते हुए यहां के 48 हज़ार परिवारों में से पच्चीस प्रतिशत में भी मेहमानों का आना मान लें और उनको भी जोड़ लें तो 2,18,000 की यह संख्या 2 लाख तीस हज़ार ही होती है. हर परिवार में एक मेहमान भी मान लें, हालांकि ऐसा होता नहीं है, तो भी ढाई पौने तीन लाख ही बैठती है! अब हरिद्वार आकर भी कोई आसरा न लेने वाले यानी यहां न ठहरने वाले यात्रियों का अनुमान भी बढ़ा-चढ़ाकर देखना होगा. ऐसे लोग किस तरह आते हैं और कितने आ सकते हैं. इसके लिए हरिद्वार आने वाली रेलों, बसों, निजी वाहनों की संख्या, उनके फेरे, और सर्वोपरि यहां की पार्किंग क्षमता को देखा गया. सर्वेक्षण ने यह बताया कि प्राप्त सारे संसाधनों का भरपूर इस्तेमाल करने के बाद भी तीन लाख से अधिक लोग एक दिन में हरिद्वार नहीं आ सकते. हो सकता है कि यह संख्या कुंभ के कारण कई गुना भी हो जाए तो भी हरिद्वार में छत पाने वालों की संख्या तीन लाख से बढ़कर अधिकाधिक पांच-छह लाख हो जाएगी. इतने ही लोग बिना पक्की छतों के अगर कुंभ की अस्थाई व्यवस्थाओं में ठहरेंगे, ऐसा मान लें तो संख्या हुई 12 लाख. इस 12 लाख की संख्या में छह लाख छत के नीचे आसरा पाने वालों को जोड़ लें तो कुल मिलाकर यह संख्या भी 18-20 लाख प्रतिदिन से अधिक नहीं बैठती.

संक्षेप में कहा जाए कि वास्तविकताओं के धरातल पर हुए इस सर्वेक्षण के नतीजों में भी धनात्मक संभावनाओं को जोड़ते हुए कहा गया था कि छह लाख से अधिक लोग एक दिन में हरिद्वार में आ और नहा नहीं सकते हैं. सर्वेक्षण पांच बरस पहले का है. इस बीच गंगा में बहुत पानी बह गया है! नया बहुत कुछ बन गया है, पर हरिद्वार का क्षेत्रफल नहीं बढ़ा है. बल्कि अतिक्रमणों के चलते खुली जगह कम ही हुई है. अब कुंभ के मद्देनज़र हो रहे कामों से बढ़ने वाली सुविधाओं को भी देख लें और आंकड़ों को अत्यंत अतिशयोक्तिपूर्ण बना लें तो भी अतिशयोक्ति की कोई सीमा तो निर्धारित करनी ही होगी, जिसे किसी तरह तो स्वीकार करने को दिल या दिमाग़ राज़ी हो. ऐसी संख्या पांच करोड़ तो हो ही नहीं सकती. भले ही उसे एक जनवरी से 30 अप्रैल तक के बीच पड़ने वाले तीन शाही स्नानों और नौ पर्व स्नानों के बीच बांट दिया जाए.

feedback@chauthiduniya.com

चर्चा कुंभनगर की

हॉटमेल को चलाने वाली कंपनी माइक्रोसॉफ्ट ने अपने सभी इंटरनेट यूज़र्स की सुरक्षा बढ़ा दी है. आने वाली मेलों को अब माइक्रोसॉफ्ट सिक्योरिटी से गुज़रना पड़ रहा है.

ई-मेल एकाउंट को हैक होने से बचाएं

रोज़ाना आपके ई-मेल पर भी कई सारी मेल आती होंगी. लगभग सारी मेल आप चेक भी करते होंगे. इसमें कुछ तो काम की रहती होंगी, तो कुछ बेकाम की. लेकिन दिक़्क़त तब होती है, जब आप ऐसी किसी मेल को ओपन करते हैं, जिसके बारे में आपको ज़्यादा जानकारी नहीं होती और ग़लती से आप उसी मेल को ओपन कर देते हैं. इसी का फ़ायदा उठाते हैं हैकर और पलक झपकते ही आपकी सारी जानकारियां उन तक पहुंच जाती हैं, लेकिन इसे रोकने के लिए हॉटमेल, जीमेल और याहू जैसी प्रमुख सॉफ्टवेयर कंपनियों ने अपने इंटरनेट यूज़र्स को कुछ तरीक़े बताए हैं, जो निश्चित तौर पर उन्हें हैकरों की गिरफ़्त में आने से बचाएंगे. आइए हम आपको बताते हैं हैकिंग से बचने के तरीक़े.

हैकिंग से संबंधित ताज़ा मामला तब प्रकाश में आया, जब हॉटमेल के एक हज़ार यूज़र्स की सीक्रेट जानकारियां एक वेबसाइट पर मिलीं. उसके बाद तो जैसे सॉफ्टवेयर कंपनियों में तहलका मच गया. फिर क्या था, गूगल, याहू और एओएल भी इसकी चपेट में आ गए. अब उनके सामने इस समस्या का हल खोजने की चुनौती थी. लिहाज़ा उन्हें यूजर्स को टिप्स देने के अलावा कुछ नहीं सूझा. इसलिए वे अपने इंटरनेट यूजर्स को जागरूक कर रहे हैं.

हॉटमेल को चलाने वाली कंपनी माइक्रोसॉफ्ट ने सभी हॉटमेल इंटरनेट यूजर्स की सुरक्षा बढ़ा दी है. आने वाली मेलों को अब माइक्रोसॉफ्ट सिक्योरिटी से गुज़रना पड़ रहा है. माइक्रोसॉफ्ट के अधिकारियों का कहना है कि इंटरनेट यूजर्स को समय-समय पर अपने एंटी वायरस सॉफ्टवेयर को अपडेट करते रहना चाहिए. इसके अलावा उन्होंने यूजर्स को यह भी सलाह दी है कि इंटरनेट इस्तेमाल के दौरान बीच में आने वाले अनजाने और अनचाहे लिंक्स पर क्लिक न करें.

इस मामले में गूगल भी कहां पीछे रहने वाला है. उसने भी अपने इंटरनेट यूजर्स से अपील की है कि वे कोई भी जानकारी किसी भी वेबसाइट पर बिना जांच-परख किए न दें. गूगल ने अपने यूजर्स को हिदायत दी है कि किसी भी वेबसाइट पर व्यक्तिगत जानकारियां देते समय बेहद सावधानी बरतें. उसने यह भी कहा कि उन वेबसाइट्स पर लॉग इन न करें, जिन पर सीधे आप जीमेल एकाउंट के ज़रिए नहीं पहुंच सकते हैं.

इन दो कंपनियों के अलावा कई प्रमुख कंपनियों ने भी अपने यूजर्स से अपील की है कि जब वे इंटरनेट का इस्तेमाल करते हैं, उस दौरान आने वाले कई विज्ञापनों पर अपनी व्यक्तिगत जानकारियां आंख मूंदकर न दें, नहीं तो आप परेशानी में पड़ सकते हैं. इसके साथ ही आप बेवजह कई वेबसाइट्स पर अपने एकाउंट न बनाएं.

आपकी थोड़ी सी लापरवाही आपको हैकर के चंगुल में फंसा सकती है. इसलिए वो कहते हैं न कि सावधानी हटी दुर्घाटना घटी. सो इस चक्कर में फंसने से बचने के लिए आपके लिए सबसे अच्छा तरीक़ा यही रहेगा कि आप सावधानी बरतें. कंपनी भी अपने यूजर्स को हिदायत दे रही है कि ऐसे कोई अनजाने मेल को ओपन न करें, जो आपको मुश्किल में डाल दे. मुश्किल में ही नहीं इसका ख़ामियाज़ा भी आपको भुगतना पड़ सकता है. इसलिए आप भी इस बात का गांठ बांध लें कि मेल करते समय आप अनजाने मेल को क्लिक नहीं करेंगे.

कूल पैड मोबाइल-2938

चाइनीज मोबाइल ब्रांड कूल पैड ने अधिकारिक तौर पर भारतीय बाज़ार में अपना मोबाइल फोन उतारा है. भारत में स्थापित होने के लिए रिलायंस उसकी मदद करेगी. यह उस कंपनी का संभवतः पहला हैंडसेट होगा, जिसने भारतीय बाज़ार में दस्तक दी है. कूल पैड 2938 ड्यूल सिम कार्ड और ड्यूल मोड वाला मोबाइल फोन है. मतलब यह कि कूल पैड 2938 जीएसएम और सीडीएमए दोनों हैंडसेट्स के लिए उपयुक्त है. कूल पैड 2938 टच स्क्रीन हैंडसेट है. इसमें 2.4 इंच का एलसीडी लगा हुआ है. यह 240.320 पिक्सल के रिजोल्यूशन के साथ ही 262 के को सपोर्ट करता है. इसका नेविगेशन सिस्टम काफी अच्छा है. यह सीडीएमए और जीएसएम दोनों तरह के हैंडसेट्स को ध्यान में रखकर बनाया गया है. हालांकि यह कोई स्लिम या वजन में हल्का हैंडसेट नहीं है. दूसरे मोबाइल फोन की तुलना में यह भारी है, लेकिन उतना भी ज़्यादा नहीं, जिससे यूजर्स को परेशान कर दे. सिम के साथ इसका वजन ज़्यादा से ज़्यादा 100 से 120 ग्राम हो सकता है.

मोबाइल में बटन का उपयोग भी बेहतरीन तरीक़े से किया गया है. इसके एक तरफ़ वॉयस रिकॉर्डर और कैमरे का बटन दिया गया है तो दूसरी तरफ आपको आवाज़, ज़ूम और माइक्रो एसडी कार्ड स्लॉट का बटन मिलेगा. जबकि यूएसबी, चार्जिंग और हैंड्स फ्री पोर्ट हैंडसेट के माथे पर है. हालांकि यह हैंडसेट जीपीआरएस को सपोर्ट नहीं करता है. सपोर्ट करता है तो सिर्फ़ डब्ल्यूएपी. इसलिए आप जब भी कोई हैंडसेट ख़रीदें तो सोच विचार कर ही ख़रीदें.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

यूएक्स 50 वी का स्लिम लैपटॉप

असेस यूएक्स 50 वी लैपटॉप का लुक काफी अट्रैक्टिव है. हालांकि इसे ख़ासतौर पर बिजनेसमैन और प्रोफेशनल्स की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर डिज़ाइन किया गया है, लेकिन इसका इस्तेमाल हर कोई कर सकता है. जहां तक आकर्षित करने की बात है तो बिजनेसमैन और प्रोफेशनल्स के लिए असेस यूएक्स 50 वी काफी अच्छा मॉडल है. कंपनी के अधिकारियों का यह दावा है. आप भी शायद यही सोच रहे होंगे कि इसमें नई कौन सी बात है. हर कंपनी वाले अपने प्रोडक्ट की बड़ाई तो करते ही हैं. हां, जब हम उसके फीचर्स पर नज़र डालते हैं तो हमें उनकी ख़ूबियों के बारे में पता चलता है. उसके बाद हम भी उस प्रोडक्ट के बारे में किए जा रहे दावों से सहमत हो जाते हैं. आइए हम आपको असेस यूएक्स 50 वी के फीचर्स से परिचित कराते हैं.

यूएक्स 50 वी स्लिम लैपटॉप है. इस लैपटॉप का आकार और भार डेस्क के लिए काफी उपयुक्त है, लेकिन इसका मतलब यह कतई नहीं है कि यूएक्स 50 वी डेस्कटॉप जैसा फंक्शन करेगा. आख़िर यह लैपटॉप है तो फंक्शन भी लैपटॉप जैसा ही करेगा. इसके बहुत से फीचर्स ऐसे हैं जो निश्चित तौर पर आपको अपनी तरफ़ आकर्षित करेंगे. यूएक्स 50 वी में तीन यूएसबी, एक वीजीए (वीडियो ग्राफिक्स अरेए), एक इदरनेट पोर्ट, एक मल्टी कार्ड रीडर, ऑडियो जैक, वेब कैम और एचडीएमआई (हाई डिफिनिशन मल्टी मीडिया इंटरफेस) लगा हुआ है. इसमें 15.6 इंच का स्क्रीन लगा हुआ है. इसके साथ ही गीगाबाइट इदरनेट, वाई-फाई एन, ब्लूटूथ, एक स्लॉट लोडिंग डीवीडी ड्राइव और यूजर्स मैन्यूअल बुक के साथ ही कुछ पावर केवल आदि लगे हुए हैं. इसमें टचपैड लगा हुआ है.

भार में दूसरे कई लैपटॉप की तुलना में काफी हल्का होने के कारण इसे कहीं ले जाने में आपको कोई दिक़्क़त नहीं होगी. अगर आप ऑफिस के लिए एक अच्छा स्लिम लैपटॉप लेना चाहते हैं तो इसके लिए आपको 66,000 रुपये चुकाने पड़ेंगे.

बजाज कावासाकी की निंजा

फ़िल्म धूम के बाद तो जैसे बाज़ार में बाइक की धूम मच गई. इस फिल्म के बाद तो युवाओं पर तेज़ गति से बाइक चलाने की धुन सी सवार हो गई. कंपनियों ने इसका ख़ूब फ़ायदा उठाया और अब तो हर कोई ज़्यादा सीसी की बाइक ख़रीदना चाहता है. कुछ याद आया आपको? नहीं, तो चलिए हम बताते हैं. हम यहां बात मूवी की नहीं, बाइक की कर रहे हैं. अगर रफ़्तार आपका पैशन है और आप बाइक के प्रति क्रेज़ी हैं तो आपके लिए अच्छी ख़बर है. बाइक बनाने वाली कंपनी बजाज ऑटो ने रफ़्तार के उन्हीं शौक़ीनों के लिए अपनी नई बाइक कावासाकी निंजा-250 आर बाज़ार में उतारी है. हालांकि इसकी क़ीमत सुनकर आप चौंक पड़ेंगे.

इसकी दिल्ली एक्सशोरूम क़ीमत 2.7 लाख रुपये है. फोर स्ट्रोक बाइक कावासाकी निंजा की बिक्री हरेक शोरूम में नहीं होगी, बल्कि कंपनी के प्रोबाइकिंग शोरूम के ज़रिए होगी. हालांकि हो सकता है कि इसके पीछे कंपनी का कोई ख़ास मक़सद हो, लेकिन अभी जो कंपनी का मक़सद है, वह बिल्कुल साफ़ है. कंपनी भारतीय बाइक बाज़ार पर क़ब्ज़ा करना चाहती है. कंपनी के अध्यक्ष एरिक वास के मुताबिक़, हम बजाज की फोर स्ट्रोक सीरीज़ में इस स्पोर्टिंग बाइक को बाज़ार में उतारकर बहुत उत्साहित हैं. कंपनी का दावा है कि बजाज 250-आर विश्व में सबसे ज़्यादा बिकने वाली बाइक है. कंपनी इस बाइक को प्रोद्योगिकी साझीदार कावासाकी के साथ मिलकर अपने चाकन संयंत्र में एसेंबल करेगी. बाइक की लांचिंग के पहले वर्ष में एक हज़ार गाड़ियां बेचने का लक्ष्य रखा गया है.

विज्ञापन हेतु संपर्क करें : 9811205225 email : advt@chauthiduniya.com

विश्वकप 2011 के लिए भारतीय टीम के जांबाज़ों को तैयार करने पर ध्यान देना ज़रूरी था, लेकिन सब कुछ उल्टा-पुलटा हो रहा है. न तो कोई ख़ास रणनीति नज़र आ रही है और न ही उसके प्रति गंभीरता.

इस खेल में कई पेंच हैं

विश्वकप भारतीय उपमहाद्वीप में ही होना है, ऐसे में भारतीय टीम का यही हाल रहा तो नतीजे का अंदाज़ा लगाना कतई मुश्किल नहीं है. जादुई और कूल कप्तान धोनी का जादू भी अब उतरने लगा है. न तो उनका बल्ला बोल रहा है और न ही उनके फ़ैसले निशाने पर सटीक बैठ रहे हैं. कहीं ऐसा न हो कि पिछले विश्वकप के पहले दौर में ही बाहर होने के बाद युवा टीम बनाने की जो कवायद चली थी, उसे फिर से दोहराना पड़ जाए. मतलब यह कि आसमान से गिरे तो खजूर पर अटके. इसके संकेत भी साफ़ नज़र आ रहे हैं.

नए चेहरों के असफल होने के बाद चयनकर्ता अपने अनुभवी खिलाड़ियों की ही शरण में चले जाते हैं. और, जब उनका जादू कमाल नहीं दिखा पाता तो फिर से युवा जोश से भारतीय टीम को लबरेज करने की मुहिम चल पड़ती है. इसी भागमभाग में टीम का कचूमर निकल जाता है और टीम अर्श से फर्श पर नज़र आने लगती है. जबकि ज़रूरत इस बात की है कि युवा चेहरों को समय मिले, उनमें यक़ीन रखा जाए, न कि अभिषेक नायर की तरह युवा खिलाड़ियों को टीम में शामिल करने के बाद बग़ैर एक भी मैच खेले घटिया प्रदर्शन के नाम पर बाहर कर दिया जाए. इससे भारतीय टीम न सिर्फ़ मज़बूत होगी, बल्कि बुलंदियों को भी छुएगी.

विश्वकप 2011 के लिए भारतीय टीम के जांबाज़ों को तैयार करने पर ध्यान देना ज़रूरी था, लेकिन सब कुछ उल्टा-पुलटा हो रहा है. न तो कोई ख़ास रणनीति नज़र आ रही है और न ही उसके प्रति गंभीरता.

भारत और ऑस्ट्रेलिया के बीच का यह मुक़ाबला जितना दिलचस्प है, उससे कहीं अधिक रोचक है भारतीय खिलाड़ियों के चयन की कहानी. इस चयन में कई पेंच हैं. पिछले साल से लेकर अभी तक भारतीय टीम के शानदार प्रदर्शन की भी यही कहानी है. दरअसल, इन सबके बीच अहम बात यह है कि अचानक नंबर एक पर पहुंचने के बाद भारतीय टीम को आख़िर हो क्या गया? चैंपियंस ट्रॉफी में इस टीम का हाल हम देख ही चुके हैं. उसके बाद भी कई सवाल उठते हैं. यदि द्रविड़ भारतीय टीम की भविष्य की रणनीति में फिट नहीं बैठते थे तो उन्हें महज़ दो शृंखलाओं के लिए भी क्यों चुना गया? कहीं सहवाग के घायल होने पर उनकी कमी पूरा करने की योजना तो नहीं थी? दरअसल काफ़ी हद तक यह बात सही भी लग रही है.

यदि ऐसा ही करना था तो पीछे देखने की जगह चयनकर्ताओं को भविष्य पर ध्यान देना चाहिए था. विश्वकप 2011 के लिए भारतीय टीम के जांबाज़ों को तैयार करने पर ध्यान देना ज़रूरी था, लेकिन सब कुछ उल्टा-पुलटा हो रहा है. न तो कोई ख़ास रणनीति नज़र आ रही है और न ही उसके प्रति गंभीरता. 2011 का

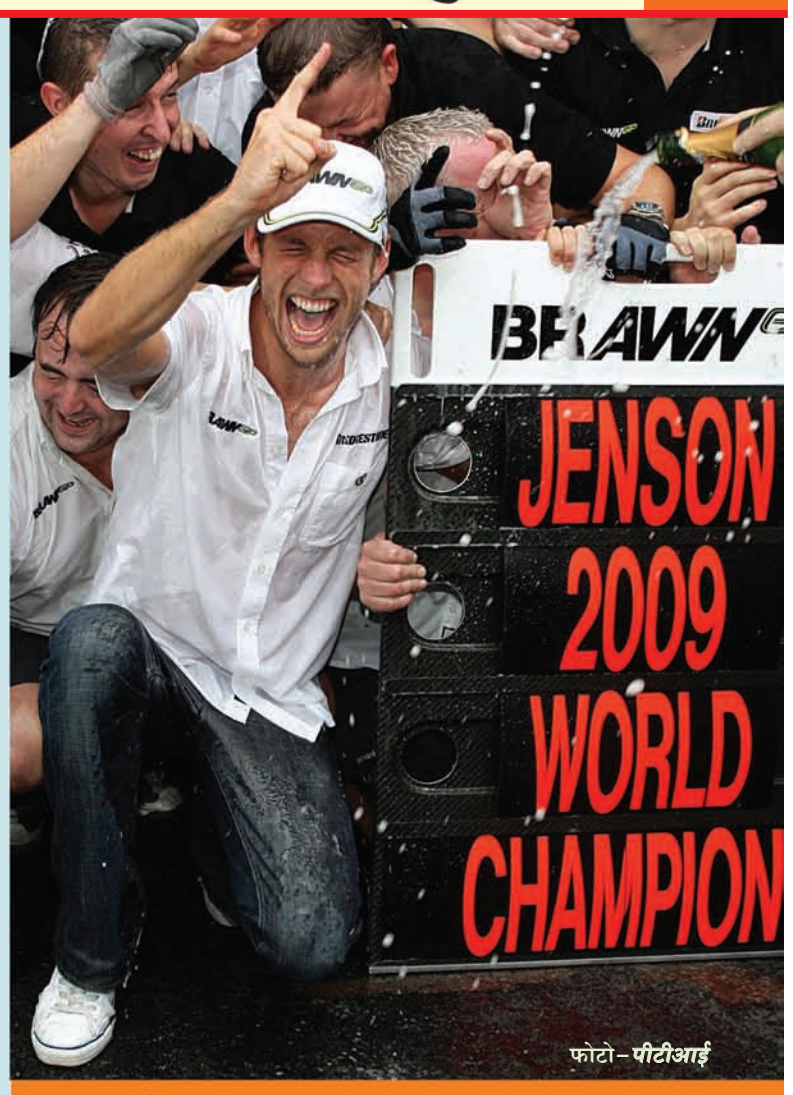

फोटो–पीटीआई

फ़ार्मूला वन का नया बादशाह

फ़ार्मूला वन को एक नया सितारा मिल गया है. जी हां, हम बात कर रहे हैं ब्रिटिश खिलाड़ी जेनसन बटन की. बटन ब्राजील में आयोजित फ़ार्मूला वन (एफ वन) की विश्व प्रतियोगिता जीतने वाले 10वें ब्रिटिश खिलाड़ी बने. बटन ने प्रतियोगिता में पांचवें स्थान पर रहते हुए यह कारनामा किया है. दरअसल शुरुआती दौर में अव्वल आने का ही नतीजा था कि पांचवीं पायदान पर रहते हुए भी बटन यह ख़िताब अपने नाम करने में कामयाब हो सके. इसके पहले ब्रिटिश खिलाड़ी ग्राहम हिल, ल्यूस हैमिल्टन, क्लार्क आदि एक से अधिक बार यह ख़िताब अपने नाम कर चुके हैं.

यह भी दिलचस्प है कि पिछले चार सालों से एफ वन के विश्व चैंपियन का फ़ैसला ब्राजीलियन ग्रांप्री से होता आ रहा है और इस बार जेनसन बटन ने एक बार फिर यह ख़िताब अपने नाम कर ख़ुद को एफ वन चैंपियनशिप का नया बादशाह साबित किया है.

खेलों की बदक़िस्मती की वजह!

हर खेल संस्था पर किसी न किसी राजनेता का ही अधिकार होता है. मतलब यह कि भारत में जितनी भी खेल संस्थाएं हैं, उनके अध्यक्ष से लेकर उपाध्यक्ष और सचिव तक की कुर्सी पर नेता ही विराजमान हैं. एआईएफएफ यानी भारतीय फुटबाल महासंघ के लिए भी यह कोई नई बात नहीं है. लेकिन जो नई बात है, वह है लंबे अर्से से बीमार चल रहे कांग्रेसी नेता प्रियरंजन दासमुंशी की जगह एआईएफएफ अध्यक्ष पद पर प्रफुल्ल पटेल का आसीन होना.

प्रियरंजन दासमुंशी

प्रफुल्ल पटेल

फोटो–प्रभात पाण्डेय

इससे फुटबॉल महासंघ पर दो दशक से भी अधिक समय से चले आ रहे दासमुंशी युग का समापन भी हो गया. प्रियरंजन दासमुंशी 1988 से ही भारतीय फुटबॉल महासंघ के अध्यक्ष पद पर विराजमान थे. ग़ौरतलब है कि दासमुंशी को पिछले साल अक्टूबर में दिल का दौरा पड़ा था और तब से पटेल अध्यक्ष पद का कार्यभार संभाल रहे थे. दरअसल, एआईएफएफ संविधान की धारा 32 (6) के तहत यदि अध्यक्ष स्थाई या अस्थाई तौर पर आधिकारिक कार्यभार नहीं संभाल सकता तो लंबे समय से उसका कार्यभार संभाल रहा उपाध्यक्ष ही आम सलाना बैठक में अध्यक्ष का ज़िम्मा संभालता है. यह ज़िम्मेदारी प्रफुल्ल पटेल ही दासमुंशी की ग़ैर मौजूदगी में संभाल रहे थे. लेकिन दिलचस्प बात यह है कि बीमारी के बावजूद पिछले साल दासमुंशी को अध्यक्ष पद पर निर्विरोध चुन लिया गया था. जबकि पटेल कार्यवाहक अध्यक्ष के तौर पर काम कर रहे थे. अब जबकि एक बार फिर अध्यक्ष पद का चुनाव हो रहा है तो पटेल इस पद के लिए एकमात्र उम्मीदवार हैं, जिन्होंने नामांकन भरा है. इस तरह एक बार फिर किसी खेल संस्था की कमान एक नेता के हाथ से दूसरे नेता की हाथ में जा रही है.

फोटो–पीटीआई

नहीं दिखी चैंपियंस लीग की चमक

सात देशों की 12 टीमें और उस पर एक से बढ़कर एक दिग्गज खिलाड़ी, जिसे खेलते देखना हर किसी की चाहत होती है और वह भी टी-20 की प्रतियोगिता में जहां गेंद और बल्ले के बीच जंग अपने चरम पर होता है. मतलब खेल के साथ भरपूर मनोरंजन, फिर भी चैंपियंस लीग अपनी छाप छोड़ने में असफल रही. जब से टी-20 का दौर शुरू हुआ है, हरकोई इसका दीवाना नज़र आता है. जब एकदिवसीय मैचों के अस्तित्व पर ख़तरा मंडराने लगा है तो कई खेल विश्लेषक टी-20 को ही क्रिकेट का भविष्य बता रहे हैं. लेकिन इस पर भी अब संकट के बादल मंडराने लगे हैं. शुरुआती दौर में ही भारतीय आईपीएल टीमें प्रतियोगिता से बाहर हुई नहीं कि इसके दर्शकों की तादाद कम होने लगी. मतलब क्रिकेट भी अब भारत के इर्द-गिर्द घूमने लगा है, दरअसल भारतीय प्रशंसक सिर्फ़ भारतीय खिलाड़ियों के खेलने पर ही स्टेडियम में नज़र आते हैं. इसका सबसे बड़ा सबूत रहा भारत में पहली बार होने वाला चैंपियंस लीग टी-20 प्रतियोगिता. कोई भी भारतीय टीम सेमीफ़ाइनल तक का भी सफ़र तय नहीं कर पाई. भारत की ओर से दिल्ली डेयरडेविल्स, हैदराबाद की डेक्कन चार्जर्स और रॉयल बंगलुरू चैलेंजर्स की टीमें प्रतियोगिता में शामिल थीं, लेकिन किसी का भी प्रदर्शन इस लायक़ नहीं था कि वह सेमीफ़ाइनल में भी पहुंच सके. जबकि दिल्ली की टीम में सहवाग और गंभीर तो हैदराबाद की कमान ख़ुद गिलक्रिस्ट संभाले हुए थे और उनकी टीम रोहित शर्मा और सायमंड्स जैसे कई सुपर सितारों से लैस थी. वहीं बंगलुरू की टीम में कैलिस, द्रविड़, कुंबले, रॉस टेलर और आईपीएल और टी-20 में शतक जड़ने वाले एकमात्र भारतीय मनीष पांडे भी थे. फिर ये टीमें फिसड्डी साबित हुईं और चैंपियंस लीग का चैंपियन बना ऑस्ट्रेलियाई टीम न्यू साउथ वेल्स (एनएसडब्ल्यू), जो एक भी मैच हारे बग़ैर फ़ाइनल तक पहुंची और वेस्टइंडीज़ की त्रिनिदाद और टोबेगो (टी एंड टी) को फ़ाइनल में 41 रनों की करारी मात दी. लेकिन सबसे दिलचस्प है कि इतने बड़े दिग्गज़ों और रोमांचक एवं मनोरंजक टी-20 मैच के बावजूद यदि कोई प्रतियोगिता अपने लिए दर्शक नहीं जुटा पाए तो यह हैरानी की ही बात है. ख़ासकर टी-20 जैसे प्रतियोगिता के लिए जहां खेल का रोमांच अपने चरम पर होता है. यदि देखें तो एकविसीय मैचों में 50-50 ओवर की जगह 20 ओवरों की दो पारी की वकालत करने वालों के लिए भी यह कम चिंता की बात नहीं है. जब 20 ओवरों की शृंखला में ही दर्शकों की संख्या कम होने लगी है तो क्या आयोजक अब इससे भी आगे जाने की सोचेंगे? फ़िलहाल इस बारे में कुछ भी कहना जल्दबाज़ी ही होगी.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

इस्तीफ़े के बदले मिली कमान

पाकिस्तान क्रिकेट में गहमागहमी का दौर बदस्तूर जारी है. पहले कप्तान यूनुस ख़ान पर चैंपियंस ट्रॉफी के सेमीफाइनल में हार के बाद मैच फिक्सिंग का आरोप लगा. उसके बाद फिक्सिंग को लेकर काफ़ी हो-हल्ला मचाया गया. इसके बाद यूनुस ख़ान ने कप्तानी से इस्तीफ़ा तक दे दिया. हालांकि यूनुस के इस्तीफ़े को पाकिस्तान क्रिकेट बोर्ड ने नामंज़ूर कर दिया. एक तरह से यह पूरी कहानी फ़िल्मी पटकथा से कम नज़र नहीं आ रही है. अब मामला यह है कि यूनुस ख़ान द्वारा इस्तीफ़े की पेशकश से कहानी में रोमांचक मोड़ आ गया है. इस्तीफ़े का यह खेल उनके लिए जीवनदान ही साबित नहीं हुआ, बल्कि इससे उनके दोनों हाथों में लड्डू आ गए. दरअसल कप्तानी के पद से इस्तीफ़े की कहानी से पाकिस्तान की जनता यूनुस ख़ान के

समर्थन में सड़कों पर उतर आई. साथ ही कई पूर्व पाकिस्तानी खिलाड़ी भी यूनुस ख़ान के समर्थन में डटे हुए थे. उनका तो यहां तक मानना था कि फिक्सिंग के जो आरोप पाकिस्तान पर लगाए जा रहे हैं, वह पाकिस्तानी टीम को बदनाम करने के अलावा कुछ भी नहीं है.

ज़्यादा वक़्त नहीं हुआ है, जब पाक खेल मंत्री ने इसके लिए बीसीसीआई को कसूरवार ठहराया था और इसका सारा ठीकरा भारतीय क्रिकेट प्रशासकों के सिर फोड़ दिया. इन सभी दबावों का नतीजा यह हुआ कि पाकिस्तान क्रिकेट बोर्ड ने यूनुस को फिक्सिंग के शक़ से न सिर्फ़ मुक्त किया, बल्कि उन्हें 2011 तक के लिए पाकिस्तान क्रिकेट टीम की कप्तानी भी सौंप दी. अब एकदिवसीय और टेस्ट टीम की कमान यूनुस के हाथों में होगी.

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया दिल्ली, 2 नवंबर–8 नवंबर 2009

विज्ञापन पाने की होड़ में अक्सर अभिनेत्रियों की दोस्ती अब तक टूटती ही आई है, क्योंकि हर कोई एक दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश में लगा रहता है.

अनुष्का और दीपिका की दोस्ती को झटका

फ़िल्मी दुनिया में दो अभिनेत्रियों के बीच लड़ाई होना एक आम बात है. यहां किसी न किसी चीज़ को लेकर पंगा होता ही रहता है. चाहे मामला किसी फ़िल्म में साथ काम करने का हो या फिर एक-दूसरे को किसी फ़िल्म या विज्ञापन से रिप्लेस करने का हो. दरअसल हर कोई अपनी पहचान बनाने में लगा रहता है. रब ने बना दी जोड़ी से शाहरुख़ ख़ान के साथ अपने करियर की शुरुआत करने वाली अनुष्का और ओम शांति ओम की दीपिका पादुकोण के साथ ऐसा ही हुआ, क्योंकि दीपिका को एक नामी हेयर ऑयल के विज्ञापन से रिप्लेस जो कर दिया गया है, यह विज्ञापन अनुष्का शर्मा को दे दिया गया है. वह इसकी नई ब्रांड एंबेसडर बन गई हैं, बल्कि यहां तक कि उन्होंने इसके लिए एक विज्ञापन शूट भी कर दिया है, जो जल्द ही स्क्रीन पर दिखाई देने वाला है. इसी बात से दोनों में खटपट हो गई है.

कभी दीपिका और अनुष्का अच्छी दोस्त थीं, लेकिन इस घटना से तो नहीं लगता कि उनकी दोस्ती क़ायम रह पाएगी. ऐसा ही कुछ पहले भी देखने को मिला था, जब शाहरुख़ ख़ान की फ़िल्म चलते-चलते में ऐश्वर्या रॉय की जगह रानी को ले लिया गया था. विज्ञापन के रिप्लेस का फंडा तो पहले भी देखा जा चुका है जब एक फेयर क्रीम के विज्ञापन में ऐश की जगह सोनम कपूर को ले लिया गया था, और ऐसा ही कुछ मामला जब भी देखने को मिला जब कोल्ड ड्रिंक के विज्ञापन में रानी मुखर्जी को हटाकर जेनिलिया डिसूजा को बतौर ब्रांड एंबेसडर चुन लिया गया था. विज्ञापनों को पाने की होड़ में सभी अभिनेत्रियों की दोस्ती आजतक टूटती ही आई है और हर कोई एक दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश में लगा रहता है. देखना यह बाक़ी है कि इनकी दोस्ती में दरार कब तक रहती है.

अब ब्लू की भी सीक्वल

देश भर के सिनेमाहॉलों में एंथनी डिसूजा की फ़िल्म ब्लू की धूम मची हुई है. ज़ाहिर है वह इससे बेहद ख़ुश होंगे, लेकिन उनकी ख़ुशी की यही एक वजह नहीं है. वह इस फ़िल्म की सीक्वल बनाने जा रहे हैं और वह भी इससे कहीं ज़्यादा बड़े पैमाने पर और कहीं ज़्यादा बड़ी तैयारियों के साथ. ब्लू के अभिनेता संजय दत्त के मुताबिक़, फ़िल्म के नए सीक्वल की जल्द ही शुरुआत होने वाली है. बक़ौल संजय, बहामा में ब्लू की शूटिंग के रोमांच को वह अब तक भूल नहीं पाए हैं. टोनी ब्लू टू के आइडिया को जल्द ही साकार करने जा रहे हैं. दिल थामकर बैठिए, इस बार फ़िल्म में एक्शन भी ज़्यादा होंगे और शार्क भी. ज़ाहिर है, ख़तरे पहले से ज़्यादा होंगे. वैसे संजय को यह बात भी गांठ बांध लेनी चाहिए कि ख़तरा सिर्फ़ शूटिंग में ही नहीं है, बॉक्स ऑफिस पर भी फ़िल्म को उतना ही ख़तरा है, क्योंकि इतिहास सीक्वल फिल्मों के बेहतरीन हश्र का नहीं रहा है.

बहरहाल, इस फिल्म में सिर्फ़ शार्क ही ज़्यादा नहीं होंगे, इस बार एक्टर्स भी पहले से ज़्यादा होंगे. संजय तो होंगे ही, फ़िल्म में अक्षय और जायद ख़ान भी होंगे. साथ में और कौन होंगे इसका ख़ुलासा होना अभी बाक़ी है. लेकिन लारा दत्ता को रिप्लेस करने की बात चल रही है. बहरहाल, हम तो यही कहेंगे कि क़िस्मत टोनी का भरपूर साथ दें और दर्शकों को एक बेहतरीन फ़िल्म देखने को मिले.

जैक्लिन की क़िस्मत चमकी

आजकल बॉलीवुड में तमाम विदेशी सुंदरियां अपनी क़िस्मत आज़माने के लिए आगे आ रही हैं. अभी हाल ही में एक नया नाम पूर्व मिस श्रीलंका जैक्लिन फर्नांडिस का भी है. उनकी क़िस्मत वाकई में अच्छी है कि उन्हें फिल्म अलादीन में अमिताभ बच्चन के साथ काम करने का मौक़ा मिला है. वैसे भी बिग बी के साथ काम करने का मौक़ा सभी को नहीं मिल पाता, नहीं तो बड़ी-बड़ी हीरोइनें अमिताभ के साथ फ़िल्में करने को तरस जाती हैं. फ़िल्म में वह रितेश देशमुख की हीरोइन बनी हैं, जो रैंप से ऐक्टिंग की फील्ड में उतर आई है. जैक्लिन का कहना है कि वह बॉलीवुड में ही रहकर अपनी पहचान बनाना चाहती हैं, जिसके लिए वह हिंदी भी सीख रही हैं. वह ख़ुद को हिंदी फ़िल्मों का बहुत बड़ा फैन बताती हैं. उन्हें हिंदी कोई और नहीं, बल्कि रितेश ख़ुद सिखा रहे हैं.

आने वाली फ़िल्में

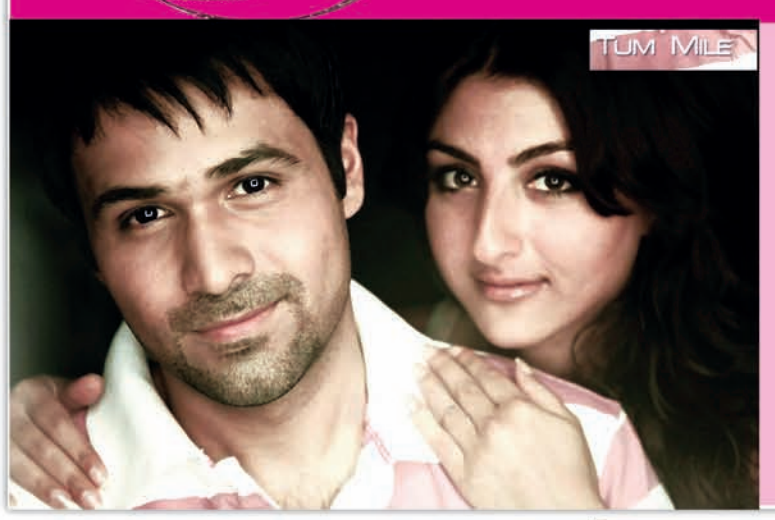

तुम मिले

इस फ़िल्म के निर्देशक कुणाल देशमुख हैं. संगीत प्रीतम का है. मुख्य भूमिका में इमरान हाशमी और सोहा अली ख़ान नज़र आएंगे. देशमुख की यह दूसरी फ़िल्म है. इससे पहले उन्होंने फ़िल्म जन्नत में निर्देशन किया था. फ़िल्म का निर्माण-सहनिर्माण सोनी म्यूज़िक और विशेष फिल्म्स ने किया है. यह फ़िल्म 26 जुलाई 2005 को मुंबई में आई बाढ़ की कहानी पर आधारित है. यह दो लोगों के बीच पनपे प्यार की कहानी है. फ़िल्म अपना कोई संदेश छोड़ पाने में कामयाब रहेगी या नहीं, यह तो उसके रिलीज़ होने के बाद ही पता चलेगा.

अफ़वाहों से दुखी असिन

फ़िल्म गज़नी से अपने करियर की शुरुआत करने वाली असिन को काफी दुख झेलने पड़ रहे हैं. कोई भी उनके बारे में कुछ कह देता है. वह सबके सवालों के जवाब देते-देते तंग आ जाती हैं. उन्हें समझ में नहीं आता कि ऐसा क्यों होता है. जो लोग उनके बारे में अफ़वाहें फैलाते हैं, वे ऐसा क्यों करते हैं. असिन का कहना है कि वह फ़िल्म उद्योग में अभी नई हैं क्योंकि दक्षिण से मुंबई आए हुए ज़्यादा समय नहीं हुआ है उनके लिए सभी नए लोग है. लोग उन्हें बेवजह विवादों में शामिल कर देते हैं. उनकी पटरी सलमान की गर्लफ्रेंड कैटरीना से भी नहीं बैठती है, क्योंकि वह अभी तक कैट को अच्छी तरह पहचानती नहीं हैं.

कुछ लोगों का कहना है कि सलमान और असिन के पिता में तनातनी है. जबकि ऐसा कुछ भी नहीं है. सलमान ख़ान ने उन्हें डैड का पोट्रेट क्या बनवाकर दिया कि यह बात अफ़वाह बनकर पूरे बॉलीवुड में फैल गई, जिससे असिन को बहुत दुख हुआ. अभी उन्हें बॉलीवुड को तौर-तरीक़े सीखने में वक़्त तो लगेगा ही क्योंकि अभी तक उनकी एक फ़िल्म ही आई है. एक फ़िल्म आई वो भी सुपरहिट हुई थी. फ़िलहाल उनकी दूसरी फ़िल्म लंदन ड्रीम्स में वह सलमान ख़ान और अजय देवगन के साथ नज़र आ रही हैं. उन्होंने अभी तक बॉलीवुड में बहुत कम लोगों के साथ काम किया है अभी उन्हें लोगों को समझने में समय लगेगा और तभी वह इन सभी अफ़वाहों का जवाब देना सीख पाएंगी. ऐसी अफ़वाहों की वजह उनकी फिल्म की कामयाबी भी हो सकती है अथवा फिर और कुछ. सच्चाई क्या है, यह तो आसिन ख़ुद बता सकती हैं.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

MURUGAPPA GROUP

BSA MOTORS e-Scooters

BSA मोटार्स आ गया
सबके दिलों पे छा गया।

BSA MOTORS की हर एक इलैक्ट्रीक स्कूटर की खरीद पर पाईये
"एक साल की बैट्री वारंटी" एवम् "Rs. 4000/- का कैश कार्ड मुफ्त"।

Conditions apply##
*Ex. showroom Price starting from Rs.15,450/- for Smile in Delhi after subsidy & cash card.
*$ Battery Warranty of 12 months / 12000 km's whichever is earlier & applicable.
*# Savings Vary from model to model.

SHAHDARA: Binsar Auto Mobiles, 954 - E, Main 100 Ft Road, Babarpur Extn.Shahdara. Phone: 011-22831100 / 22831400/9911994444/9911450121. NAJAFGARH: CNS Retail Pvt Ltd, Plot No. 1, Block – G, Gopal Nagar. Phone: 011 - 28015634 / 28010709/ 09958019000/9212365634. DWARKA-MAIN PALAM DABRI ROAD: CNS Retail Pvt Ltd, D - 70/5, Main Palam Dabri Road, Mahavir Enclave. Phone: 011 – 28011702/ 45017150/09818239724/ 9212275634/ 9212170006. NANGLOI: CNS Retail Pvt Ltd, Plot No 18, Ram Nagar Colony, Main Najafgarh Road, Nangloi. Phone: 9971734599 / 9213899686. KRISHNA NAGAR: Agrawal Motors, A-1/14. Krishna Nagar, Chachi Building Chawk,Near Lal Quarter Market. Phone: 011 – 22452829/09312835117. KAROL BAGH: Imperial Cycles, 53/2, Deshbandhu Gupta Road, Karol Bagh. Phone: 011-65461542/ 28722276/25717886/9811453355. ASHOK NAGAR: New Golden Cycle Store, 36/13, Ground Floor, Ashok Nagar. Phone: 9810807183. NOIDA: Agrawal Motors, B-41 & 42, Sector 16 , Near Mirula's Hotel, Gautam Budh Nagar. Phone: 0120-4249906/ 4232242/9312835117/ 09350906906. ROHINI: Rocky Autolinks, F 18/61, Rohini, Sector 8. Phone: 9811032353 (Opening Shortly)

चौथी दुनिया

बिहार झारखंड

www.chauthiduniya.com

दिल्ली, 2 नवंबर–8 नवंबर 2009

झारखंड विधानसभा चुनाव

पांच चरणों की पांच चुनौतियां

झारखंड में पांच चरणों में होने वाला चुनाव चुनौतियों से भरा है. सबसे बड़ी चुनौती तो झारखंड की जनता के सामने है कि वह किसके हाथों में शासन की बागडोर सौंपे. बिहार से विभाजित हो झारखंड जब से अलग राज्य बना है, प्रदेश में विकास के लिए काम करने वाली एक भी सरकार नहीं बनी है. पिछली जितनी भी सरकारें थीं, पूरी तरह भ्रष्टाचार और सरकारी लूट में डूबी रहीं. शासन में अस्थिरता और प्रशासन में निकम्मापन झारखंड सरकार का पर्याय बन चुका है. ऐसा एक भी मुख्यमंत्री नज़र नहीं आया जो जनता और समाज की समस्या को समझे और उन्हें ख़त्म करने की थोड़ी भी प्रतिबद्धता दिखाए. मुख्यमंत्री और मंत्री बनकर कई गुमनाम और छुटभैया नेता नामचीन और धन्ना सेठ बन गए. लेकिन उन्हें चुनकर विधानसभा और लोकसभा में भेजने वाली ग़रीब जनता रोज़गार, शिक्षा, अन्न आवास, सड़क, बिजली, पानी और स्वास्थ्य जैसी बुनियादी सुविधाओं के लिए तरसती रही. इसलिए यह चुनाव झारखंड की जनता के लिए एक बड़ी चुनौती है कि क्या वो इस बार एक ऐसी सरकार को चुन पाएंगे जो अगले पांच साल तक उनके दुख-दर्द को बांट सके, उसे कम कर सके और उनकी परेशानियों का कोई हल निकाल सके. चुनाव में ऐसे प्रतिनिधि को चुनना सच में एक बड़ी चुनौती होगी जो उन्हें ग़रीबी और भुखमरी के अंधियारे से निकालकर विकास का रोशन चेहरा दिखा सके.

नक्सली समस्या चुनाव आयोग के सामने दूसरी सबसे बड़ी चुनौती है. झारखंड नक्सलियों से सबसे ज़्यादा प्रभावित राज्य है. केंद्र सरकार नक्सलियों के ख़िलाफ़ तेज़ मुहिम छेड़ रखी है. नक्सली चुनाव को लोकतंत्र का नाटक मानते हैं और इसलिए चुनाव बहिष्कार का नारा बुलंद करते रहे हैं. नक्सली इस बार भी चुनाव में बाधा पैदा करने के लिए अपनी पूरी ताक़त लगाएंगे और यह मतदान नक्सली हिंसा के बीच होगा, इस बात की पूरी आशंका है. इसी ख़तरे से निपटने के लिए चुनाव आयोग ने चुनाव पांच चरणों में कराने का फ़ैसला किया है. केंद्रीय गृहमंत्री पी चिदंबरम ने यह भरोसा दिलाया है कि चुनाव के लिए ज़रूरी सारे सुरक्षा इंतजाम किए जाएंगे और पारा मिलिट्री फोर्स की तैनाती में कोई कमी नहीं होगी. भयमुक्त माहौल में शांतिपूर्ण मतदान करना चुनाव आयोग की सबसे कठिन चुनौती है.

झारखंड की जनता और चुनाव आयोग के बाद राजनीतिक पार्टियों के लिए भी यह चुनाव कम बड़ी चुनौती नहीं है. संकट से घिरी भारतीय जनता पार्टी के लिए तो झारखंड विधानसभा चुनाव तो करो या मरो जैसी है. लोकसभा चुनाव के बाद महाराष्ट्र, हरियाणा और अरुणाचल प्रदेश में ख़राब प्रदर्शन के बाद पार्टी चक्रव्यूह में फंसी नज़र आ रही है. भस्मासुरी अंदाज़ में पार्टी के नेता ही इसे बर्बाद करने पर तुले हैं. ऐसे में देखना यह है कि क्या भारतीय जनता पार्टी झारखंड में चुनाव जीतकर फिर से सरकार बना पाती है? भारतीय जनता पार्टी के लिए यह चुनाव भविष्य की दिशा तय करने वाला है. इस चुनाव से ही यह तय होगा कि विनाश की ओर कूच कर रही भाजपा का संकट कितना गहराएगा. पार्टी के पुनर्निर्माण का सिलसिला इस चुनाव से शुरू होगा. हालांकि झारखंड की राजनीतिक और समाजिक परिस्थिति भाजपा के पक्ष में है, लेकिन चुनाव में भाजपा की स्थिति कैसी होगी, इस बारे में फ़िलहाल कुछ भी नहीं कहा जा सकता. दरअसल जीती बाजी हारने में भाजपा के रिकॉर्ड को देखते हुए कोई भी भविष्यवाणी जोख़िम भरी ही होगी.

झारखंड का चुनाव कांग्रेस के लिए भी बड़ी चुनौती है. महाराष्ट्र, हरियाणा और अरुणाचल प्रदेश की तरह यह चुनाव उसके लिए कतई आसान नहीं होगा. झारखंड में कांग्रेस को अपनी साख बचानी है. पूर्व गवर्नर सिब्ते रज़ी ने जो कारनामा किया और जिस तरह कांग्रेस ने भ्रष्ट और दाग़ी मुख्यमंत्रियों को अपना समर्थन दिया उससे जनता के बीच यही संदेश गया कि सोनिया, राहुल और मनमोहन सिंह की कांग्रेस और झारखंड की कांग्रेस में ज़मीन-आसमान का अंतर है. पिछले कुछ चुनावों में यह देखा गया है कि कांग्रेस पार्टी हर बार या तो छोटी पार्टियों के दबाव में आ जाती है या फिर आरजेडी और झारखंड मुक्ति मोर्चा जैसी पार्टियों के हाथों ब्लैकमेल हुई है. यही वजह है कि लोकसभा चुनाव में कांग्रेस को इस राज्य में हार का सामना करना पड़ा. इस चुनाव में कांग्रेस को अपनी साख की लड़ाई लड़नी है. कांग्रेस के लिए झारखंड चुनाव हिंदी पट्टी में अपना खोया जनाधार फिर से हासिल करने का एक सुनहरा मौक़ा है.

झारखंड मुक्ति मोर्चा के लिए भी यह चुनाव करो या मरो की स्थिति लेकर आई है. झामुमो ही वह पार्टी है जिसने आंदोलन के ज़रिए इस राज्य को स्थापित किया. जिस पार्टी और नेता ने झारखंड को अस्तित्व में लाया वही पार्टी आज हास्यास्पद स्थिति में खड़ी है. मुख्यमंत्री रहते हुए शिबू सोरेन चुनाव हारकर भारतीय राजनीति का एक काला दाग़ बन गए. अब झारखंड मुक्ति मोर्चा उनके बेटे चला रहे हैं. आंदोलन से जुड़े बाक़ी नेता दूसरी पार्टियों में कूच कर गए हैं या फिर उन्होंने अपनी अलग पार्टी बना ली है. इस चुनाव में अगर झारखंड मुक्ति मोर्चा का हाल शिबू सोरेन वाला हुआ तो झारखंड मुक्ति मोर्चा का भविष्य ही अधर में लटक जाएगा.

नवलेश नवल

feedback@chauthiduniya.com

झारखंड में सियासी सरगर्मी बढ़ी

चुनाव आयोग द्वारा झारखंड में विधानसभा चुनाव कार्यक्रमों की घोषणा किए जाने के बाद सूबे में सियासी सरगर्मियां बढ़ गई हैं. मालूम हो कि झारखंड विधानसभा का यह दूसरा चुनाव है. राजनीतिक दलों के बीच हलचल तेज़ हो गई है. मुख्य चुनाव आयुक्त नवीन चावला ने पांच चरणों में चुनाव कराने की घोषणा की है. ग़ौरतलब है कि 2005 में झारखंड में पहली बार विधानसभा चुनाव हुआ था, जिसमें तीन चरणों में मतदान हुआ था. सूबे की 81 सीटों के लिए मतदान 27 नवंबर, 2 दिसंबर, 8 दिसंबर, 12 दिसंबर और 18 दिसंबर को होगा. मतगणना 23 दिसंबर को होगी और 31 दिसंबर तक चुनाव प्रक्रिया संपन्न कर ली जाएगी. चुनाव की अधिसूचना जारी होने के बाद राज्य में आचार संहिता लागू हो गई है.

वर्ष 2005 में दलगत स्थिति

चुनावी महासंग्राम में अपनी दमदार उपस्थिति दर्ज़ कराने के लिए सभी राजनीतिक पार्टियों ने अपने-अपने तरीक़े से कवायद शुरू कर दी है. यूं तो चुनाव के पूर्व गठबंधन की संभावना धूमिल नज़र आ रही है, लेकिन यह भी सच्चाई है कि बग़ैर गठबंधन के कोई भी दल सरकार नहीं बना सकता. यूपीए-एनडीए में दबाव की राजनीति तेज़ हो गई है. यूपीए में शामिल प्रमुख दल कांग्रेस, राजद और झामुमो ने अकेले अपने बलबूते पर चुनावी जंग में कूदने का ऐलान कर रखा है. वहीं दूसरी ओर एनडीए के मुख्य घटक दल जदयू में भी सीटों के बंटवारे को लेकर रस्साकशी जारी है.

पिछले विधानसभा चुनाव में अराजकता और अस्थिरता का माहौल बन गया था, लेकिन इस बार का विधानसभा चुनाव निर्णायक होगा. शह और मात का खेल अभी से ही शुरू हो गया है. राजनीतिक दलों की खामोशी टूटने लगी है.

(शेष पृष्ठ 18 पर)

समस्याओं, दुखों और कष्टों से निजात पाने के लिए लोग भगवान की शरण में जाते हैं. भक्तों को यह अटूट विश्वास रहता है कि भगवान उनके कष्टों से उन्हें निजात दिलाएंगे.

मोकामा में दबंगों–अपराधियों के हौसले इस क़दर बुलंद हैं कि मौक़ा मिलने पर वे भगवान को भी नहीं बख़्शते. मंदिर–मठों और ठाकुरवाड़ियों की ज़मीनों पर उनका अवैध क़ब्ज़ा इस बात का प्रमाण है कि नेताओं ने उन्हें संरक्षण दे रखा है और पुलिस ने अपनी आंखें बंद कर रखी हैं.

ठाकुरवाड़ी की ज़मीन पर अपराधियों का क़ब्ज़ा

सूबे की क़ानून व्यवस्था कितनी चुस्त-दुरुस्त है, इसका अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि यहां धार्मिक स्थल तक सुरक्षित नहीं हैं. मठों, मंदिरों और ठाकुरवाड़ियों की ज़मीन पर दबंग-अपराधी क़ब्ज़ा किए बैठे हैं और महज़ पंद्रह फर्लांग की दूरी पर बसे राज्य पुलिस के मुखिया को इसकी ख़बर तक नहीं है!

समस्याओं, दुखों और कष्टों से निजात पाने के लिए लोग भगवान की शरण में जाते हैं. भक्तों को यह अटूट विश्वास रहता है कि भगवान उनके कष्टों से उन्हें निजात दिलाएंगे. धन और धान्य की कामना लेकर भी लोग भगवान के दर पर शीश नवाते हैं, लेकिन यदि ठाकुर जी को समस्याओं में डाल दिया जाए और वह भोग को भी तरसने लगें तो इसे क्या कहेंगे आप? जो भगवान पूरे संसार को ज्योतिर्मय करते हैं और सभी लोगों को घर-संसार दिलाते हैं, यदि वही अंधकार में रहें और उनकी वेदी पर बारिश की बूंदें टपकें तो सुनने में अटपटा लगता है. लेकिन यही हक़ीक़त है. यदि आपको विश्वास न हो तो एक बार मोकामा चले आइए, ठाकुर जी के निवास स्थान की बदहाली को देखकर आप कांप उठेंगे.

डीजीपी को मामले की जानकारी नहीं

राज्य के पुलिस महानिदेशक आनंद शंकर का सूचना तंत्र कितना कमज़ोर है, इसकी एक बानगी तब देखने को मिली, जब वह हरि कीर्तन करने अपने गृह नगर मोकामा आए. हैरानी की बात यह है कि डीजीपी उसी तपस्वी जी ठाकुरवाड़ी में हरे राम हरे कृष्ण का अखंड जाप करने पहुंचे थे, जहां की ज़मीन पर अपराधियों का क़ब्ज़ा है. प्रवचन-कीर्तन के बाद जब पत्रकारों ने उनसे ठाकुरवाड़ी की ज़मीन पर अपराधियों के क़ब्ज़े के बारे में पूछा तो उन्होंने इस तरह की किसी भी जानकारी से इंकार कर दिया. उन्होंने कहा कि क़ानून अपना काम करेगा. मालूम हो कि तपस्वी जी ठाकुरवाड़ी डीजीपी के मोलदियार टोला स्थित आवास से केवल दस-पंद्रह फर्लांग की दूरी पर है.

पटना से सौ किलोमीटर पूरब स्थित मोकामा में सौ वर्षों से भी अधिक पुरानी श्री तपस्वी जी ठाकुरवाड़ी वर्तमान में इन्हीं समस्याओं से दो-चार हो रही है. इस ऐतिहासिक ठाकुरवाड़ी का आलम यह है कि भगवान भोग को भी तरसते हैं. पूरी इमारत जर्जर हो चुकी है और इसकी वजह ठाकुरवाड़ी की ज़मीन पर अपराधियों और दबंगों का क़ब्ज़ा है. ज़मीन से होने वाली आय ठाकुरवाड़ी को प्राप्त नहीं हो रही है. इसके महंत वृंदादास काफ़ी वृद्ध हैं. उन्होंने बताया कि ठाकुरवाड़ी के पास 62 बीघा ज़मीन है. इसमें से 32 बीघा ज़मीन पर टाल क्षेत्र के कुख्यात अपराधी मिथलेश यादव उर्फ मिठू यादव का क़ब्ज़ा है. मिठू यादव घोसवरी थाना क्षेत्र के गोसाई गांव का रहने वाला है और उस पर कई मामले दर्ज़ हैं. किसी समय शेखपुरा, नालंदा और नवादा में आतंक का पर्याय रहे अशोक महतो एवं कपिल यादव उर्फ कपिल पहलवान का शागिर्द रह चुका मिठू यादव कई बार जेल जा चुका है और बतौर निर्दलीय उम्मीदवार विधानसभा का चुनाव भी लड़ चुका है.

महंत वृंदादास और स्थानीय लोग बताते हैं कि 62 बीघा ज़मीन से ठाकुरवाड़ी को कम से कम दो लाख रुपये प्रतिवर्ष मिलने चाहिए. लेकिन इसका दस फ़ीसदी भी नहीं मिल पाता. मिठू यादव से पहले ठाकुरवाड़ी की ज़मीन कुख्यात अपराधी निरजेश सिंह उर्फ नागा सिंह के क़ब्ज़े में थी. पांच दर्ज़न से अधिक मामलों में नामजद निरजेश फ़िलहाल बाढ़ जेल में बंद है. नागा सिंह और मिठू यादव में टाल की ज़मीन को लेकर विवाद हुआ तो मिठू ने ठाकुरवाड़ी की ज़मीन पर क़ब्ज़ा कर लिया. गांव में रहने वाले मुरारी सिंह एवं अन्य लोग बताते हैं कि ज़मीन से होने वाली आमदनी से वंचित रहने के कारण ठाकुरवाड़ी की हालत दिनोंदिन दयनीय होती जा रही है.

इसी प्रकार छोटी ठाकुरवाड़ी के नाम से चर्चित ठरेसरी जी ठाकुरवाड़ी भी पूरी तरह बदहाल है. कभी यहां से श्री पुरी जगन्नाथ रथ यात्रा की तर्ज़ पर भव्य रथ यात्रा निकलती थी. आज आलम यह है कि ठाकुरवाड़ी का भवन पूरी तरह जर्जर हो चुका है. कहने को तो इस ठाकुरवाड़ी के पास सौ बीघे से भी अधिक ज़मीन है, लेकिन ख़ुद महंत ठनठन दास को भी पता नहीं है कि उनके स्वामित्व में कितनी ज़मीन है. वह भी स्वीकार करते हैं कि ठाकुर जी की ज़मीन पर दबंगों का क़ब्ज़ा है. एक समय था, जब इन दोनों ठाकुरवाड़ियों से मोलदियार टोला के दर्ज़नों परिवारों के चूल्हे जला करते थे, लेकिन आज कोई इन्हें पूछने वाला तक नहीं है.

विधान परिषद सदस्य नीरज कुमार ने पिछली बार ठाकुरवाड़ियों की संपत्ति को मुक्त कराने का प्रयास किया था. इस बार वह फिर सक्रिय हैं. उन्होंने बताया कि बिहार राज्य धार्मिक न्यास परिषद के प्रशासक आचार्य किशोर कुणाल से मिलकर ज़मीन की मुक्ति और ठाकुरवाड़ी के जीर्णोद्धार का प्रयास किया जाएगा. बरहपुर स्थित श्री रामजानकी ठाकुरवाड़ी की ज़मीन को किशोर कुणाल द्वारा गठित कमेटी ने दबंगों के क़ब्ज़े से मुक्त करा लिया है, लेकिन उसकी स्थिति भी ठीक नहीं है. थानाध्यक्ष नित्यानंद शुक्ला एवं अंचलाधिकारी राजेश कुमार ने बताया कि ग्रामीणों द्वारा शिक़ायत मिली है और किसी भी सूरत में अपराधियों को ज़मीन नहीं जोतने दी जाएगी.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

ग़लतफ़हमी में हैं लालू-पासवान : सुशील मोदी

फोटो–प्रभात पाण्डेय

सरोज सिंह

सुशील कुमार मोदी का नाम आते ही ज़ेहन में एक ऐसे नेता की तस्वीर उभरती है, जिसने राजनीति में संघर्ष का रास्ता चुना और आगे बढ़ते हुए बिहार में उप मुख्यमंत्री की कुर्सी संभाली. मामला चाहे चारा घोटाले का हो या फिर अलकतरा घोटाले का, मोदी ने सदन से लेकर सड़क तक आंदोलन छेड़ा और लोगों को यह बताने का प्रयास किया कि जनता के पैसों के साथ गोलमाल हुआ है. लालू-राबड़ी शासन के विरोध में छेड़े गए विभिन्न आंदोलनों को मंज़िल तक पहुंचाने में मोदी की भूमिका को राज्य के लोग अभी भूले नहीं हैं. मोदी अब सत्ता में हैं, इसलिए उनकी भूमिका भी बदल गई है. सरकार के साथ-साथ भाजपा को संभालने की दोहरी ज़िम्मेदारी के बावजूद वह घर, परिवार, पुराने दोस्तों और साथियों के लिए भी समय निकाल लेते हैं. एक सुंदर और विकसित बिहार का सपना उनके दिल में है, पर नौकरशाही की सुस्त चाल से वह थोड़े निराश दिखते हैं. पार्टी की भीतरी नोंकझोंक को मोदी कुछ नेताओं की व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा का परिणाम बताते हैं. लालू-पासवान की सत्ता में वापसी के सवाल पर वह मुस्कुराते हुए कहते हैं कि दोनों ही ग़लतफ़हमी के शिकार हैं. पेश हैं बातचीत के प्रमुख अंश:-

सरकार व संगठन में दूरी दिखाई पड़ती है. कार्यकर्ता उपेक्षित महसूस कर रहे हैं. भाजपा के कुछ नेता भी नाराज़ हैं. ऐसा क्यों?

सरकार के हर फ़ैसले पर संगठन की मुहर लगी है. पिछले चार सालों में सरकार ने ऐसा कोई काम नहीं किया, जिसे पार्टी न चाहती हो. इसलिए यह कहना ग़लत होगा कि कार्यकर्ताओं की उपेक्षा हुई है और संगठन से दूरी बढ़ी है. रही बात कुछ नेताओं की नाराज़गी की, तो मैं बता दूं कि इसकी एकमात्र वजह व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा है. पार्टी में आमराय से फ़ैसले होते हैं और सभी उसे मानते हैं. मैं ख़ुश हूं कि पिछले चार सालों में सरकार व संगठन के बीच बेहतर तालमेल रहा.

आप विकास के नारे के साथ सत्ता में आए. राज्य में अब तक हुए विकास को आप किस तरह देखते हैं?

देखिए, विकास की कोई सीमा नहीं है. श्रीकृष्ण बाबू के बाद से ही बिहार में विकास ठप हो गया था. हम लोगों ने तो शून्य से शुरुआत की है. जनता की अपेक्षा हमसे बहुत ज़्यादा है और इसमें कुछ ग़लत भी नहीं है. आज बिहार की जो तस्वीर आप देख रहे हैं, क्या दस साल पहले कोई इसकी कल्पना भी कर सकता था? केंद्र के अवरोध के बावजूद हमारी सरकार समाज के सबसे कमज़ोर तबक़े के घरों में विकास की लौ जलाने के लिए दिन-रात जुटी हुई है.

विपक्ष कहता है कि घोषणाएं ज़्यादा हैं, काम कम है. क्या आपको नहीं लगता कि विकास की गति धीमी है?

मैं पहले भी कह चुका हूं कि राज्य में वर्क कल्चर नाम की कोई चीज़ नहीं रह गई थी. लालू-राबड़ी का शासन ऐसा था कि नौकरशाहों ने विकास कार्यों में दिलचस्पी नहीं ली या फिर उन्हें अपने ढंग से काम नहीं करने दिया गया. बिगड़ी हुई इस आदत को सुधरने में समय तो लगेगा ही. सरकार तो जनता के हित में नीतियां बनाती है, पर उसका लाभ दिलाने की ज़िम्मेदारी तो अफ़सरों पर होती है. जिस दिन नौकरशाह नीतियों को अमली जामा पहनाने की गति तेज़ कर देंगे, आपको विकास दिखने लगेगा.

क्या आपके कामों को जनता नहीं देख पा रही है? उपचुनाव के परिणाम आपके पक्ष में नहीं गए.

उपचुनाव के परिणाम को हम सरकार के कामकाज पर जनादेश नहीं मानते. दरअसल, स्थानीय उम्मीदवार के प्रति जनता की नाराज़गी के कारण परिणाम हमारे पक्ष में नहीं आए. इसके साथ ही महंगाई के मुद्दे को हम जनता तक ठीक से नहीं ले जा सके. समीक्षा बैठक में भाजपा ने परिणामों का गहन विश्लेषण किया है.

लेकिन उपचुनाव के परिणाम ने लालू प्रसाद व रामविलास पासवान के हौसले बढ़ा दिए हैं और दोनों ही नीतीश को सत्ता से उखाड़ फेंकने का दावा करने लगे हैं.

दोनों नेता ग़लतफ़हमी में जी रहे हैं. बिहार की जनता इन नेताओं को अच्छी तरह जानती है. वोट की राजनीति करने वाले इन दोनों नेताओं का राज्य के विकास से कुछ लेना-देना नहीं है. किसी तरह सत्ता हासिल करना ही इनका मक़सद है, ताकि अपने घर- परिवार को लाभ पहुंचाया जा सके. ग़रीब व लाचार जनता के दर्द से लालू-पासवान का कोई वास्ता नहीं है. एसी कमरों में बैठकर ग़रीबी दूर करने का नारा देने वाले इन नेताओं को आगामी विधानसभा चुनाव में जनता ज़रूर सबक सिखाएगी.

आगामी चुनाव में आप कांग्रेस की क्या भूमिका देखते हैं?

राजद, लोजपा व कांग्रेस आपस में मिले हुए हैं. कांग्रेस का अलग चुनाव लड़ने का दावा महज़ नाटक है. कांग्रेस के दिल्ली में बैठे नेता भी यह जानते हैं कि लालू और पासवान के बिना बिहार में उनका काम चलने वाला नहीं है. इसलिए भीतर ही भीतर उनमें तालमेल बना हुआ है. कांग्रेस के नेता केवल सवर्ण मतदाताओं को ठगने के लिए अलग चुनाव लड़ने की बड़ी-बड़ी घोषणाएं कर रहे हैं.

आपको लगता है कि केंद्र सरकार अब भी लालू प्रसाद को कई मामलों में बचा रही है?

लालू और कांग्रेस एक दूसरे के बिना नहीं रह सकते. पक्ष लेने की बात नहीं है तो ममता बनर्जी को लालू के ख़िलाफ़ जांच की पूरी आज़ादी क्यों नहीं दी जा रही है? लोकसभा में बैठने के लिए आगे की सीट दी जा रही है. भाजपा नेताओं के घरों से सामान फेंका जा रहा है, पर रामविलास से पूछने वाला कोई नहीं है. ये सब एक हैं और जनता भी इस बात को समझ रही है.

नीतीश कुमार के साथ आपके संबंध अच्छे हैं, लेकिन कुछ लोग आपको उनका पिछलग्गू कहते हैं.

यही तो बात है, कुछ लोगों की मंशा है कि सुशील मोदी और नीतीश कुमार लड़ते-झगड़ते रहें, पर पिछले चार सालों में ऐसे लोग निराश ही हुए हैं और आगे भी निराश ही रहेंगे. जनता ने हमारे कंधों पर एक बड़ी ज़िम्मेदारी दी है और हम पूरी ईमानदारी व मेहनत से अपने काम में लगे हैं. बेहतर तालमेल को पिछलग्गूपन का नाम देने वाले नेता भी जनता के काम में अपना समय दें तो बेहतर होगा.

सुशील मोदी को केंद्र की राजनीति रास आती है या फिर बिहार में सूबाई राजनीति?

दरअसल, यहां व्यक्तिगत इच्छा का कोई सवाल नहीं है. भारतीय जनता पार्टी में पार्टी का फ़ैसला अंतिम माना जाता है. मुझे पार्टी की तरफ़ से जो आदेश मिलता है, उसे मैं अक्षरशः मानता हूं. पार्टी ने पहले लोकसभा का चुनाव लड़वाया, मैं लड़ा. अब मुझे बिहार में ज़िम्मेदारी सौंपी गई है तो इसे निभा रहा हूं.

feedback@chauthiduniya.com

हाईवे की हालत देख हैरान रह गए मंत्री

मोकामा से घोसवरी-सरमेरा जाने वाले राष्ट्रीय उच्च पथ 82-ए की हालत बहुत ख़राब है. जलभराव, कीचड़ और जगह-जगह गड्ढे इस हाईवे पर आम बात हैं. राज्य सरकार के पथ निर्माण मंत्री डॉ. प्रेम कुमार गत दिनों इसकी दुर्दशा देखकर हैरान रह गए. वह अभियंताओं की टीम लेकर एनएच 82-ए का निरीक्षण करने निकले थे. उन्हें मोकामा से घोसवरी-सरमेरा होते हुए राजगीर तक राष्ट्रीय उच्च पथ का जायज़ा लेना था. घोसवरी में पड़ाव के दौरान मीडिया के सामने उन्होंने सरकार के कामकाज का जमकर बखान किया. वहां, मोकामा जीरो माइल से घोसवरी तक के सफ़र में उन्हें एक भी झटका नहीं लगा था.

प्रेम कुमार जब घोसवरी से चलकर पैजुना पुल से आगे बढ़े और उनकी कार मुख्य सड़क से 15 फीट नीचे खंदक वाली सड़क में जाकर फिर ऊपर आई तो उन्हें समझ में आ गया कि यह डगर इतनी आसान नहीं है. जब दूसरी खंदक को पार करने की बारी आई तो उन्होंने स्कॉर्पियो छोड़ दी और पैदल ही चल दिए. पैजुना-सहरी के बीच मंत्री को एक घंटे तक रुकना पड़ा, क्योंकि चालक और अंगरक्षकों को भय सता रहा था कि कहीं गाड़ी फंस न जाए. मंत्री की मजबूरन भी भांपते हुए उन्होंने स्वीकार किया कि यहां सड़क नाम की कोई चीज नहीं है.

पथ निर्माण मंत्री के अनुसार, सरकार उन राष्ट्रीय उच्च पथों पर भी अपने कोष से पैसा ख़र्च करने जा रही है, जिनका निर्माण और रखरखाव केंद्र सरकार को करना है. उन्होंने कहा कि राज्य में 28 राष्ट्रीय उच्च पथ हैं और उनकी लंबाई 1950 किमी है. 1250 किमी सड़क बन चुकी है. शेष के लिए 711 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है. इसी प्रकार राजकीय उच्च पथों वाली स्टेट हाईवे की लंबाई 8200 किमी है, जिसमें 7200 किमी सड़क बन रही है तथा शेष का निर्माण कार्य 2010 तक पूरा कर लिया जाएगा.

राज्य की सड़कों की ख़स्ताहाली का ठीकरा उन्होंने पिछली सरकार के साथ-साथ केंद्र सरकार पर भी फोड़ा. पथ निर्माण मंत्री ने कहा कि केंद्र के उदासीन रवैये को देखते हुए राज्य सरकार अपने पैसों से एनएच की सड़कों का निर्माण करेगी. जब उनसे विधान परिषद में घोसवरी के एनएच 82-ए पर दो पुलों के निर्माण के संबंध में हुई घोषणा के बारे में पूछा गया तो उन्होंने इसे प्रक्रियागत मामला बताया. उस एनएच की बदहाली पर विधान परिषद में एमएलसी नीरज कुमार ने प्रश्न उठाया था और पथ निर्माण मंत्री ने घोषणा की थी कि दो वर्षों में दो प्रस्ताव भेजे जाने के बावजूद केंद्र की ओर से स्वीकृति नहीं मिली. अब राज्य सरकार अपनी निधि से एनएच 82-ए पर पुल बनवाएगी. गौरतलब है कि मोकामा-घोसवरी-सरमेरा मार्ग को उस वक़्त राष्ट्रीय उच्च पथ का दर्जा मिला था, जब केंद्र में राजग की सरकार थी और नीतीश कुमार केंद्रीय भूतल परिवहन मंत्री थे.

जिला जदयू उपाध्यक्ष दिलीप पटेल, प्रखंड अध्यक्ष परशुराम पासवान और मुखिया धर्मराज प्रसाद ने मंत्री से कहा कि पुल बनने में काफ़ी समय लगेगा, इसलिए वहां तीन फीट ऊंचा ह्यूम पाइप डायवर्जन बनाया जाए. मंत्री ने अधिकारियों को तत्काल निर्देश दिया कि डायवर्जन का प्राक्कलन तैयार किया जाए.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

झारखंड में सियासी सरगर्मी बढ़ी

पृष्ठ 17 का शेष

यूपीए-एनडीए की जंग में छोटी-छोटी पार्टियां चुनावी हवा का रुख़ बदलने में सहायक होंगी. राज्य में राष्ट्रपति शासन से उत्साहित कांग्रेस ने विकास कार्यक्रमों को आधार मानकर किला फतह करने की योजना बना रखी है. वह अपनी शर्तों पर गठबंधन का प्लॉट तैयार करने में जुटी है. यही कारण है कि उसने अभी तक राजद और झाविमो से किसी तरह का कोई संवाद नहीं किया है. हालांकि झाविमो प्रमुख यूपीए धड़े में शामिल हैं. वह कांग्रेस आलाकमान से कुछ शर्तों पर गठबंधन चाहते हैं, लेकिन अभी तक बात नहीं बनी है. दूसरी ओर राजद प्रमुख लालू प्रसाद ने भी सोनिया गांधी से झारखंड में मिलजुल कर चुनाव लड़ने की सलाह दी है. मगर, कांग्रेस की तरफ से अभी तक किसी तरह का आश्वासन नहीं मिला है. झामुमो प्रमुख शिबू सोरेन ने कांग्रेस का रुख़ भांपकर ही अकेले चलने की राह अपना ली है. पिछली बार गठबंधन के तहत 17 सीटों पर झामुमो ने जीत दर्ज़ की थी. पार्टी प्रमुख को अपनी ताक़त का अहसास हो रहा है. वह मान रहे हैं कि उनके पुराने साथी सूरज मंडल के आने से संथाल परगना का दुर्ग मज़बूत हुआ है. वहीं उत्तरी छोटा नागपुर और कोल्हान क्षेत्र से झामुमो को काफी उम्मीदें हैं.

झामुमो महासचिव हेमंत सोरेन और सूरज मंडल ने भी अपने दम पर चुनाव लड़ने की बात कही है, लेकिन अब कांग्रेस के प्रभारी का स्वर बदल गया है. वह पहले कह रहे थे कि कांग्रेस 81 सीटों पर चुनाव लड़ने की तैयारी कर चुकी है. हालांकि यही बात प्रदीप बलमुचू ने भी बार-बार दोहराई है, लेकिन पांच चरणों में चुनाव होने के कारण हवा का रुख़ देखकर यह कयास लगाया जा रहा है कि गठबंधन का चोला कांग्रेस फिर से ओढ़ेगी. राजद हालांकि गठबंधन के लिए हाथ-पैर मार रहा है, लेकिन केवल सात सीटों पर जीत दर्ज़ कराने वाले राजद को इस चुनाव में पलामू सहित अन्य सीटों पर अपनी साख बचाने के लिए यूपीए के सहारे की ज़रूरत महसूस हो रही है.

झाविमो प्रमुख बाबूलाल मरांडी भी अपनी पार्टी को बढ़त दिलाने के लिए इस विधानसभा चुनाव में भाग्य आजमाएंगे. इससे पहले उन्हें कई विधानसभा उपचुनावों में हार का मुंह देखना पड़ा है. बाबूलाल को इस चुनाव में हल्के ढंग से लेना यूपीए के लिए आसान नहीं होगा. भाजपा को पटखनी देने के लिए कांग्रेस को उनसे हाथ मिलाना उपयोगी साबित हो सकता है. इस बात का ध्यान कांग्रेस ज़रूर रखेगी, लेकिन अभी इस पर मंथन चलेगा. दो-तीन हफ्तों के बाद तस्वीर साफ होगी. अगर कांग्रेस का झामुमो से चुनावी गठबंधन नहीं हुआ और झाविमो से सहमति बन गई तो कुछ सीटों पर तालमेल हो सकता है. कांग्रेस राजद से गठबंधन करने के लिए उत्सुक नहीं है. पिछले लोकसभा चुनाव में गठबंधन के कारण ही यूपीए को झारखंड में अच्छी सफलता मिली थी, लेकिन कांग्रेस को यह ख़ुशफहमी हो गई थी कि वह गठबंधन धर्म का निर्वाह किए बिना विधानसभा चुनाव में भी बेहतर प्रदर्शन करेगी. कांग्रेस ने झामुमो को 40 सीटें तो दीं, लेकिन बाद में द्वितीय व तृतीय चरण के चुनाव में कांग्रेस अंतिम समय में टुंडी, गोड्डा व देवघर से अपने उम्मीदवार खड़े कर गठबंधन धर्म से बाहर निकल गई थी और तीनों सीटों पर उसे हार का मुंह देखना पड़ा था.

नवगठित राज्य में भाजपा पहली बार सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी और उसने 30 सीटों पर क़ब्ज़ा जमाया. उसके सहयोगी दल जदयू को छह सीटें मिली थीं. जोड़तोड़ की राजनीति कर निर्दलीयों को मिलाने और जादुई आंकड़ा पार करने के बाद भाजपा सरकार बनाने में सफल रही. एनडीए के सत्ताच्युत होने के बाद 2005 का विधानसभा चुनाव लड़ा गया था. इसके बावजूद एनडीए को पूर्ण बहुमत नहीं मिल पाया था. अब चूंकि राष्ट्रपति शासन के अंतर्गत यह चुनाव होना है. दस महीने के शासन की अवधि में कांग्रेस को जनाधार टटोलने का बेहतर अवसर मिला है. वह इसका फ़ायदा लेना चाहती है. भाजपा लोकसभा में आठ सीटें जीत कर गदगद है. उसे लगता है कि विधानसभा चुनाव में उसकी राह आसान है, लेकिन पार्टी में बढ़ी गुटबाजी और भितरघात के कारण चुनावी वैतरणी पार करना उसके लिए टेढ़ी खीर साबित होगा. भाजपा अध्यक्ष रघुवर दास वैसे तो 81 सीटों पर चुनाव लड़ने की बात कह चुके हैं, लेकिन भाजपा-जदयू का अंतिम फ़ैसला दिल्ली में लिया जाना है. इसलिए कुछ दिनों बाद ही गठबंधन के मसले पर बात हो सकती है, क्योंकि जदयू अकेले चुनाव लड़ने की हिमाकत नहीं कर सकता है. उसे भाजपा का सहारा चाहिए तो भाजपा भी राजद का वोट काटने के लिए झारखंड के सीमावर्ती क्षेत्रों में जदयू से गठबंधन कर सकती है. उधर जदयू की घेराबंदी से भाजपा के दिग्गज परेशान हैं. एनडीए की एकता पर संशय बरकरार है. चुनावी समीकरण के मुद्दे पर बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने अभी अपने पत्ते नहीं खोले हैं, लेकिन प्रदेश अध्यक्ष जलेश्वर महतो की मानें तो जदयू को बराबरी का हक़ चाहिए. वहीं दूसरी ओर आजसू एनडीए धड़े में शामिल थी, लेकिन पार्टी प्रमुख सुदेश महतो ने अभी तक अकेले चलने का ही निर्णय ले रखा है. जानकारी के अनुसार इस बार उनकी कुर्मी कार्ड खेलने की योजना है. अगर इस पर बात बनी तो आजसू जदयू से तालमेल कर सकती है.

प्रथम विधानसभा चुनाव में कुछ निर्दलियों के जीतने के बाद जो सत्ता संग्राम हुआ, उसे भूलना मुश्किल है. इसके बाद लगभग सभी निर्दलीय अदालती चक्करों से घिरे हुए हैं. वे अपने दम पर ही चुनाव लड़ने की क्षमता रखते हैं, क्योंकि धन-बल उनके साथ है. इसका साक्षात प्रमाण मधु कोड़ा है. वैसे भानु प्रताप शाही, बंधु तिर्की, जोबा मांझी और कमलेश सिंह अकेले चुनाव लड़ेंगे या किसी पार्टी के टिकट पर, यह देखना दिलचस्प होगा. वहीं दूसरी ओर अदालती चक्कर से निजात न मिलने के कारण एनोस एक्का और हरिनारायण राय के चुनाव लड़ने के बारे में अभी कुछ भी कहना मुश्किल है. पिछले विधानसभा चुनाव की तर्ज़ पर इस बार भी निर्दलीय उम्मीदवारों पर राष्ट्रीय पार्टियों का ध्यान नहीं है.

राज्य में नई सरकार के गठन को लेकर चुनावी कसरत शुरू हो चुकी है. सभी दलों में प्रत्याशियों की टिकट दौड़ और चुनावी गठबंधन की कोशिशें तेज़ हो गई हैं. पिछले लोकसभा और हाल में हुए तीन राज्यों के विधानसभा चुनावों में जीत का परचम लहराने वाली कांग्रेस के हौसले बुलंद हैं. राज्य में कांग्रेस महासचिव राहुल गांधी के दौरे से कार्यकर्ताओं में नई ऊर्जा का संचार हुआ है.

भाजपा किसी भी क़ीमत पर झारखंड की सत्ता पर दोबारा काबिज होना चाहती है. उसके कार्यकर्ता उत्साहित हैं. लोकसभा की 14 में से आठ सीटों पर जीत दर्ज़ कराने के बाद पार्टी का मनोबल बढ़ा है. जदयू व आजसू से चुनाव पूर्व या बाद में उसके तालमेल की संभावना है. हालांकि इस पर अभी फ़ैसला नहीं हुआ है.

झामुमो प्रमुख शिबू सोरेन ने सभी सीटों पर चुनाव लड़ने का मन बनाया है, लेकिन सूबे की सबसे बड़ी क्षेत्रीय पार्टी होने के बावजूद झामुमो पिछली बार 40 सीटों में से कुल 17 सीटों पर ही अपनी जीत दर्ज़ करा पाई थी. झामुमो भी पूर्ण बहुमत का सपना पाले हुए है, लेकिन अभी तक शिबू सोरेन अपनी साख नहीं बना पाए हैं. इसके बावजूद पार्टी की ओर से कहा जा रहा है कि गठबंधन के तहत चुनाव लड़ने से झामुमो को घाटा उठाना पड़ा है.

इस चुनाव में झारखंड पार्टी, बसपा, सपा, लोजपा और भाकपा माले को छोड़कर सभी वामपंथी पार्टियां ज़मीन तलाशने में जुटी हैं. तमाड़ में शिबू सोरेन को मात देने वाले राजा पीटर अब झापा को टाटा कर चुके हैं. एनोस क़ानूनी उलझनों से कब उबरेंगे, यह कहना मुश्किल है. वैसे इस बार तृणमूल कांग्रेस के उम्मीदवार भी यहां से अपनी क़िस्मत आजमा सकते हैं. माकपा अभी तक यहां अपना खाता नहीं खोल पाई है. भाकपा का उम्मीदवार ज़रूर विधानसभा पहुंचने में सफल रहा है.

नवलेश नवल
feedback@chauthiduniya.com

बोधिवृक्ष पर तस्करों की नज़र

तस्करों की नज़र अब बौद्ध धर्मावलंबियों के पवित्र बोधिवृक्ष पर भी पड़ गई है. बोधगया में जिस वृक्ष के नीचे राजकुमार सिद्धार्थ को बुद्धत्व की प्राप्ति हुई थी, उसके पत्तों, टहनियों और बीज से उपजे छोटे-छोटे पौधों की अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में मुंहमांगी क़ीमत मिलती है. इसी वजह से तस्करों का एक बड़ा नेटवर्क इस काम को अंजाम देने में सक्रिय है. बोधिवृक्ष के एक पत्ते की क़ीमत 50 डॉलर तक वसूली जाती है.

दुनिया भर से पर्यटक बोधगया आते हैं और यादगार के रूप में पवित्र बोधिवृक्ष के पत्ते, टहनी और उसके बीज से उपजे छोटे-छोटे पौधे ले जाना चाहते हैं. तस्कर इसी आस्था एवं विश्वास को भुनाने की ताक़ में रहते हैं और मौक़ा मिलते ही वे बोधिवृक्ष के पत्तों व टहनियों को बौद्ध देशों में पहुंचाकर अच्छी-ख़ासी रक़म वसूलते हैं. पता चला है कि तस्करी के इस गोरखधंधे में महाबोधि मंदिर परिसर में तैनात प्रबंधकारिणी समिति के कई कर्मचारी भी कथित रूप से शामिल हैं.

कुछ दिन पूर्व जब महाबोधि मंदिर परिसर में तैनात एक कर्मचारी बोधिवृक्ष के पत्ते को एक विदेशी के हाथों बेच रहा था. उस वक़्त वहां खड़े एक भारतीय बौद्ध भिक्षु ने उसकी तस्वीर अपने कैमरे में क़ैद कर ली. उसके बाद महाबोधि मंदिर परिसर में तैनात सभी कर्मचारी एकजुट हो गए और उन्होंने झूठा आरोप लगाकर उस बौद्ध भिक्षु की जमकर पिटाई कर दी. मामले की वास्तविकता जानकर भी बोधगया प्रबंधकारिणी समिति और पुलिस प्रशासन ने कोई कार्रवाई नहीं की. यही नहीं, शिकायत करने गए बौद्ध भिक्षु को भगा दिया गया. तब उस बौद्ध भिक्षु ने अदालत की शरण ली और वहां उसने बोधिवृक्ष के पत्ते की तस्करी किए जाने और अपने साथ मारपीट होने की घटना से सबको अवगत कराया.

विदेशी बौद्ध धर्मावलंबियों के मन में हमेशा यह कामना रहती है कि वे जीवन में कम से कम एक बार बोधगया आकर भगवान बुद्ध की ज्ञान भूमि को नमन करें. जिस प्रकार हिंदुओं के लिए गंगा नदी और गंगाजल का महत्व है, उसी प्रकार बौद्धों के लिए पवित्र बोधिवृक्ष और उसके पत्ते का महत्व है. बोधिवृक्ष के पत्ते को तोड़ना सख्त मना है, लेकिन जो पत्ते नीचे गिरते हैं, उन्हें वहां मौजूद कर्मचारी अपनी जेब में रख लेते हैं और मंदिर में आने वाले विदेशी बौद्ध भिक्षुओं के हाथों बेच देते हैं.

दूसरी ओर तस्कर प्रतिदिन अपने आदमियों को मंदिर परिसर में भेज कर बोधिवृक्ष के पत्तों को एकत्र कराते हैं और फिर उन्हें बेच देते हैं. बोधगया मंदिर प्रबंधकारिणी समिति के सदस्य डॉ. अरविंद कुमार सिंह ने बोधिवृक्ष के पत्तों और टहनियों की तस्करी की बात को ग़लत बताया और कहा कि पत्ते या टहनी की तस्करी नहीं होती, बल्कि पेड़ से टूटकर गिरे पत्ते श्रद्धालु ले जाते हैं. इस पेड़ के बीज से परिसर में जन्में पौधे लेने के लिए समिति के कार्यालय में पांच सौ रुपये की रसीद कटवानी पड़ती है.

मालूम हो कि जुलाई 2006 में बोधिवृक्ष की एक टहनी को काटकर विदेशी बौद्धों के हाथों बेचने का मामला सुर्ख़ियों में आया था, तब राज्य सरकार के निर्देश पर ज़िला प्रशासन ने इस मामले की जांच एक कमेटी से कराने के बाद पूरे प्रकरण को ठंडे बस्ते में डाल दिया था. सूत्रों के अनुसार,

सुनियोजित तरीक़े से बोधगया से बोधिवृक्ष के पत्तों और टहनियों की तस्करी जापान, थाईलैंड, चीन, ताईवान, कोरिया और श्रीलंका आदि बौद्ध देशों में की जा रही है. और तो और, दूसरे पीपल के पत्तों को भी बोधिवृक्ष के पत्ते बताकर विदेशी बौद्ध श्रद्धालुओं को बेच दिया जाता है.

सुनील कुमार सिंह
feedback@chauthiduniya.com

Postal Regn. No. DL/ND-11/6139/2009-11, RNI No. 45843/86

चौथी दुनिया

दिल्ली, 2 नवंबर–8 नवंबर 2009

वैद्यनाथ मंदिर में प्रतिदिन लगभग 70 हज़ार श्रद्धालु जलार्पण कर सकते हैं, जबकि सावन में प्रतिदिन लगभग डेढ़ लाख श्रद्धालु आते हैं. भीड़ बढ़ जाने की वजह से कई बार श्रद्धालुओं की दम घुटने से मौत भी हो जाती है.

मक़सद में नाकाम रहा देवघर मंदिर प्रबंधन बोर्ड

बाबा वैद्यनाथ मंदिर की समुचित व्यवस्था, विकास और श्रद्धालुओं की सुविधा के लिए वर्ष 2002 में गठित मंदिर प्रबंधन बोर्ड अपने उद्देश्यों को पूरा करने में असफल साबित हो रहा है. श्रद्धालुओं की लगातार बढ़ती भीड़ को देखते हुए उच्च न्यायालय की ओर से भी सुविधाएं बढ़ाने व वैकल्पिक व्यवस्था करने का सुझाव दिया जा चुका है. बावजूद इसके बोर्ड इस दिशा में अभी तक कोई ठोस निर्णय नहीं ले पा रहा है.

बोर्ड के सदस्य मंडल में राज्य शासन के उच्चाधिकारी, ज़िले के सर्वोच्च प्रशासनिक व पुलिस पदाधिकारी, वरिष्ठ कांग्रेसी नेता एवं पूर्व मंत्री, धार्मिक संस्था के प्रमुख, सांसद, विधायक और अधिवक्ता आदि शामिल हैं. बोर्ड का काम नियमित और सालाना पूजा कार्यक्रमों को संचालित करना भर रह गया है. 12 सदस्यीय बोर्ड की बैठक भी नियमित तौर पर नहीं होती. कुछ साल पहले किशोर कुणाल बोर्ड की सदस्यता से इस्तीफ़ा दे चुके हैं. सदस्य एस पी सहारिया एवं दिलीप जयरथ भी बैठकों में न के बराबर ही उपस्थित होते हैं. इसके बावजूद उनके स्थान पर किसी अन्य स्थानीय नागरिक को बोर्ड का सदस्य मनोनीत नहीं किया गया.

बोर्ड के गठन के समय यह निर्णय लिया गया था कि इसमें पंडा धर्मरक्षिणी सभा के दो प्रतिनिधियों को बतौर सदस्य मनोनीत किया जाएगा, लेकिन सभा इस निर्णय का बहिष्कार कर चुकी है. मंदिर की सुव्यवस्था और विकास के उद्देश्य से बोर्ड के सदस्य देश के कई तीर्थस्थलों का भ्रमण भी कर चुके हैं. उधर बोर्ड की निष्क्रियता के चलते श्रद्धालुओं को कई तरह की परेशानियों से दो-चार होना पड़ रहा है. सावन के महीने में यहां प्रतिदिन बड़ी संख्या में कांवड़ियों का आगमन होता है. सुलभ जलार्पण की व्यवस्था न हो पाने के चलते आम श्रद्धालु शिवलिंग पर जलार्पण नहीं कर पाते. मंदिर में प्रतिदिन आसानी से लगभग 70 हज़ार श्रद्धालु जलार्पण कर सकते हैं, जबकि सावन में प्रतिदिन लगभग डेढ़ लाख श्रद्धालु आते हैं. भीड़ बढ़ जाने की वजह से कई बार श्रद्धालुओं की दम घुटने से मौत भी हो जाती है.

आस्था की प्रतीक शिवगंगा की भी समुचित सफाई नहीं हो पा रही है. वाहनों की अवैध पार्किंग के चलते शिवगंगा में गंदगी फैल रही है. चालक बड़े आराम से वाहनों की धुलाई-सफाई करते हैं और कचरा शिवगंगा में बहा देते हैं. वाहनों से अवैध रूप से पार्किंग शुल्क वसूला जाता है.

बोर्ड की ओर से शुरू की गई वैद्यनाथ पत्रिका का प्रकाशन भी बंद हो गया है. बोर्ड के एक निर्णय के अनुसार तिरुपति की तर्ज पर श्रद्धालुओं को प्रसाद के रूप में लड्डू, मेवा और चंदन आदि देने की व्यवस्था शुरू की गई थी, उसे भी बंद कर दिया गया. मंदिर परिसर में पाकेटमारी व चोरी की घटनाएं भी बढ़ रही हैं. जबकि मंदिर परिसर में ही पुलिस थाना है. यहां दिन के दूसरे पहर में पेयजल की आपूर्ति भी ठप रहती है.

इन तमाम समस्याओं के बावजूद बोर्ड निष्क्रिय बना हुआ है और इससे न केवल श्रद्धालुओं को खासी परेशानी हो रही है, बल्कि उनमें रोष भी पैदा हो रहा है. बोर्ड के सचिव एवं सह ज़िला उपायुक्त मस्तराम मीणा का मानना है कि बढ़ती भीड़ को देखते हुए सुलभ जलार्पण हेतु वैकल्पिक व्यवस्था ज़रूरी है. इस संदर्भ में बोर्ड के सदस्यों की सहमति के बाद ही कोई ठोस निर्णय लिया जा सकता है.

मीणा ने बताया कि वैकल्पिक व्यवस्था हेतु बोर्ड की बैठक में वह अपनी राय रख चुके हैं. शिवगंगा को साफ़ रखने के लिए जनता का सहयोग बहुत ज़रूरी है. अवैध पार्किंग को रोका जाएगा.

रंजीत कुमार झा
feedback@chauthiduniya.com

राजस्थानी बाला का भोजपुरी प्रेम

जहां एक तरफ़ बॉलीवुड की कई बड़ी हीरोइनें हॉलीवुड का रुख़ कर रही हैं, तो वहीं दूसरी तरफ़ एक अभिनेत्री ऐसी भी है, जो भोजपुरी फ़िल्मों में अपना सिक्का जमाना चाहती है. जी हां, यह अभिनेत्री हैं शुभि शर्मा, जिन्हें भोजपुरिया माटी की ख़ुशबू कुछ ज़्यादा ही रास आ रही है.

शुभि राजस्थान के गुलाबी शहर जयपुर में पली-बढ़ी हैं और वहां की दो क्षेत्रीय फ़िल्मों में काम कर चुकी हैं. शायद बहुत कम लोग ही जानते होंगे कि उन्होंने अपना डेब्यू बॉलीवुड की फ़िल्म *मनी है तो हनी है* से किया था. बावजूद इसके उनका मन भोजपुरी फ़िल्मों में ही रमता है. वह कहती हैं कि उन्हें यहां से बहुत प्यार मिला है. सभी को-स्टार्स, जिनके साथ उन्होंने काम किया है, से उन्हें कुछ न कुछ सीखने को मिला है. चाहे वह दिनेश लाल यादव निरहुआ हों या प्रवेश लाल यादव.

ग़ौरतलब है कि शुभि, दिनेश लाल यादव निरहुआ प्रोडक्शन के बैनर तले बनी फ़िल्म *चलनी के चालल दूल्हा* में काम कर चुकी हैं. इस फ़िल्म के निर्देशक अजय सिन्हा हैं, जो इससे पहले *ससुरा बड़ा पैसा वाला* जैसी ब्लॉक बस्टर फ़िल्म बना चुके हैं.

ज़ाहिर है, शुभि उत्साहित तो होंगी ही. उन्होंने यह मुक़ाम आसानी से हासिल नहीं किया है. इसके लिए काफी मशक़्क़त की है. शुभि ने पहले नमित कपूर के स्कूल से अभिनय का प्रशिक्षण लिया. उसके बाद आचार्य क्लासेस से डांस सीखा. लेकिन उनके सामने सबसे बड़ा चैलेंज तब आया, जब भोजपुरी भाषा सीखने की बात आई. इसके लिए उन्होंने निर्देशक अजय सिन्हा से भोजपुरी में संवाद बोलने का लहज़ा सीखा और उसका अभ्यास किया.

अब वह भोजपुरी सीख चुकी हैं. राजस्थान से बॉलीवुड और फिर भोजपुरी के एक वीडियो एलबम से अपनी पारी शुरू करने वाली शुभि सिन्हा के हौसले बुलंद हैं.

हम उम्मीद करते हैं कि यह राजस्थानी बाला भोजपुरी फ़िल्मों में यूं ही अपने जलवे बिख़ेरती रहें.

शुभि अपने अभिनय के ज़रिए अपनी एक अलग पहचान कायम करना चाहती हैं और इसके लिए वह भरपूर मेहनत भी कर रही हैं. भोजपुरी भाषा सीखकर उन्होंने साबित कर दिया है कि कुछ भी असंभव नहीं है.

चौथी दुनिया ब्यूरो
feedback@chauthiduniya.com

समस्तीपुर जिला के 38 वें स्थापना दिवस पर समस्त जिलावासियों एवं 'चौथी दुनियां' के पाठकों को

हार्दिक शुभकामनायें

रामकलेवर सिंह जिलाध्यक्ष

जिला कांग्रेस कमेटी, समस्तीपुर

हिन्दी का पहला सप्ताहिक अखबार 'चौथी दुनिया' बिहार-झारखंड संस्करण के प्रकाशन एवं समस्तीपुर जिला के 38 वें स्थापना दिवस पर समस्त जिलावासियों एवं जनप्रतिनिधियों को

हार्दिक शुभकामनायें

रोमा भारती

सदस्य बिहार विधान सभा

राष्ट्रीय कम्प्यूटर साक्षरता अभियान के अन्तर्गत

कम्प्यूटर साफ्टवेयर एवं हार्डवेयर तथा CTTP

एक वर्षीय मास्टर डिप्लोमा MDCIM

Web Designing, Multimedia, Internet, E-mail, D.T.P., Accounting, Hardware

अति दुर्बल आय वर्ग के लिए 40% से 100% की छात्रवृत्ति, यह छात्रवृति सामान्य बौद्धिक परीक्षा के आधार पर

बिहार-झारखंड के सभी जिले एवं प्रखंडों के प्रभारी बनने के लिए

सम्पर्क करें

मिथलेश पासवान (D.O.)

राष्ट्रीय कम्प्युटर साक्षरता अभियान

बिहार-झारखंड

मो.—9934476305/9525256352

Number of Seats - 100 Seats (M/F)

कम्प्यूटर टिचर्स ट्रेनिंग प्रोग्राम CTTP

DURATION - 12 MONTH

1. Fundamental
2. MS Office
3. Programming Techniqes
4. Java (Care Java)
5. H.T.M.L.
6. C++
7. Accounting and Tally (Overview)
8. Teaching Attitude
9. Teaching Session with Practical (45 Classes must)

Number of Seats : 20 Seats (M/F)
Reserved Seats : 10 Seats (M/F)

श्रम मंत्रालय भारत सरकार से मान्यता प्राप्त

ITI Diploma Courses

Diploma in Electrical Courses

DURATION - 6 MONTH

Basic Electrical Training, House Wiring, Repair of home appliance, Rewinding of Ac/Dc Motors, Transformer winding, Armature.

Diploma in Fabrication Courses

DURATION - 6 MONTH

Basic Welding Gas/Arc, Gas Cutting Pipe Welding, Tig Welding.

Eligibility

MDICIM 8th Pass, CTTP - Appearing 10+2th, ITI 10 th Pass.

गया शहर में शीघ्र शुरू हो रहा है केन्द्र

COMPUTER WORLD

Education Institute

स्थान- राजेश पुस्तक के आगे, एस. ज्वेलर्स के बगल में, लक्ष्मी नगर, गुरूआ (गया)

'चौथी दुनिया' बिहार-झारखंड संस्करण के शुभारंभ एवं समस्तीपुर जिला के 38 वें स्थापना दिवस पर हसनपुर विधानसभा क्षेत्र के लोगों एवं समस्त जिलावासियों को

हार्दिक शुभकामनायें

सुनील कुमार पुष्पम

सदस्य

बिहार विधान सभा